डाक पंजीयन क्र. म.प्र.भोपाल/4-340/2017-19
आर.एन.आई. क्र. 51966/1989, आई.एस.एस.एन. 2455-2399
प्रकाशन तिथि 15 फरवरी 2017
पोस्टिंग तिथि 15 एवं 20 फरवरी 2017

फरवरी 2017 वर्ष 29 अंक 2 मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

कैशलैस टेक्नॉलॉजी

- पटरी पर दौड़ती मौत
- खतरनाक वायरस का उत्पादन
- हरित क्रांति और मृदा स्वास्थ्य

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
फरवरी 2017
वर्ष 29
अंक 2

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरद चंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी,
मनोज पटैरिया, डॉ. संध्या चतुर्वेदी,
प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे, डॉ.अशोक कुमार ग्वाल

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल

सह–संपादक
मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, शैलेष पांडेय, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर,
राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार,
ए.के.सिंह, हरीश कुमार पहारे, अभिषेक आनंद

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
निशांत श्रीवास्तव, राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, संदीप वशिष्ठ,
दर्शन व्यास, मनीष खरे, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, राजन सोनी,
अजीत चतुर्वेदी, अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली,
कुम्भलाल यादव, राजेश बोस, देबदत्ता बॅनर्जी, नरेन्द्र कुमार

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

अगर कोई सत्य प्रकृति के नियमों में संगत रखता हो तो उससे उत्तम और कोई चीज नहीं हो सकती और इस संगत की सबसे अच्छी कसौटी प्रयोग है

माइकेल फैराडे

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 271

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

क्रम

विज्ञान वार्ता

विज्ञान-संचार प्रतिभाओं को पहचानें
● डॉ. चंद्र मोहन नौटियाल से मनीष मोहन गोरे की बातचीत /05

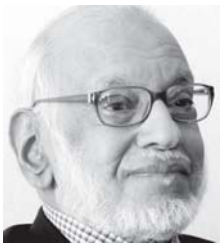

श्रद्धांजलि

बहुआयामी विरल विज्ञानी : प्रो.एम.जी.के मेनन
● शुकदेव प्रसाद /12

आज भी खरे हैं तालाब ● अनुपम मिश्र /17

विज्ञान आलेख

आयडिया से बदलती और बनती हमारी दुनिया
● डॉ.के.एम.जैन /21

पटरी पर दौड़ती मौत ● विजन कुमार पांडेय /29

खतरनाक वायरस उत्पादन
● प्रमोद भार्गव /33

हरित क्रांति और मृदा स्वास्थ्य
● डॉ. दिनेश मणि /35

तकनीक

कैशलेस टेक्नॉलॉजी
● रविशंकर श्रीवास्तव /42

कॅरियर

वेल्डिंग इंजीनियरिंग
● संजय गोस्वामी /46

रपट : इंडिया इंटरनेशल ट्रेड फेयर 2016
❑ 13 वें वर्ल्ड रोबोट ओलंपियाड का भारत में आयोजन
❑ देश की वैज्ञानिक उन्नति की झाँकी दिखाता डीएसटी पवेलियन
● गौरव, भूषण /51

विज्ञान समाचार/53

गतिविधि/56

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-6766166 (डेस्क), 0755-6766101, 0755-2432801 (रिसेप्शन), 0755-6766110(फैक्स)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा पहले-पहल प्रिंटरी, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

विज्ञान-संचार प्रतिभाओं को पहचानें

डॉ. चंद्रमोहन नौटियाल से मनीष मोहन गोरे की बातचीत

अक्सर इस बात पर ज़ोर दिया जाता है कि विज्ञान की समझ और वैज्ञानिक सूझबूझ को बढ़ावा देने की दिशा में जब वैज्ञानिक आगे आकर विज्ञान संचारकों का हाथ बटायेंगे तो तस्वीर बदल सकती है। ऐसे उदाहरण बहुत कम देखने को मिलते हैं। डॉ. चंद्र मोहन नौटियाल एक ऐसा ही उदाहरण है। मूलतः भौतिक विज्ञानी डॉ. नौटियाल ने लगभग तीन दशकों तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग की लखनऊ स्थित एक राष्ट्रीय प्रयोगशाला (बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान) में रेडियोकार्बन लैब के प्रभारी के पद पर अपनी सेवाएँ दीं। आरंभ से मेधावी विद्यार्थी रहे डॉ. नौटियाल ने वैज्ञानिक शोध में भी उत्कृष्ट योगदान दिये। वर्ष 1988 में राष्ट्रपति भवन में भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (इंसा) का युवा वैज्ञानिक मेडल हासिल किया जिसके बाद तात्कालीन राष्ट्रपति डॉ. आर. वेंकटरामन के द्वारा डॉ. नौटियाल सहित सभी विजेताओं को राष्ट्रपति भवन में विशेष भोज पर आमंत्रित किया गया। उन्हें आगे चलकर इंसा/डीएफजी छात्रवृत्ति पर जर्मनी की प्रतिष्ठित दो मैक्स प्लांक संस्थानों में शोध का अवसर मिला। इसके समांतर वे सतत रूप से विज्ञान संचार की गतिविधियों में भी संलग्न रहे। इस विधा के भारतीय पुरोधा रहे प्रोफेसर यशपाल, डॉ. जयंत विष्णु नार्लीकर और डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का उन्हें सानिध्य मिला। अनेक रेडियो-टीवी विज्ञान कार्यक्रमों का लेखन-समन्वय नए विज्ञान संचार के विभिन्न फार्मेट के लिए बहुत सारे माध्यमों और भाषाओं में योगदान दिया तथा विज्ञान तकनीकी एवं विज्ञान संचार पर केंद्रित करीब 700 लोकविज्ञान व्याख्यान देकर डॉ. नौटियाल ने इस क्षेत्र में एक मिसाल कायम की है। उन्होंने संचार की विरल विधा कविता और गीत का लेखन करके भी विज्ञान संचार को समृद्ध किया है। भारत रत्न डॉ. सी. एन.आर. राव और पद्म भूषण डॉ. आर.ए. माशेलकर के व्याख्यानों का संकलन तथा श्रव्य-दृश्य रूप में सम्पादित करके प्रकाशित किया। राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, डीएसटी (भारत सरकार) के एक महत्वपूर्ण विज्ञान संचार अभियान राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के साथ भी वे प्रारंभ से जुड़े हुए हैं। 1995 में घटित महत्वपूर्ण आकाशीय घटना (पूर्ण सूर्यग्रहण) के इरादतगंज (इलाहाबाद) से सीधा प्रसारण का आपने आँखों देखा हाल सुनाया। आपको कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय (सेंट डियागो), कलोन विश्वविद्यालय (जर्मनी), बर्न विश्वविद्यालय (स्विट्ज़रलैंड), न्यू मैक्सिको विश्वविद्यालय (अमरीका), मास्को (रूस) तथा कोचिमिंह (वियतनाम) में व्याख्यान के लिए आमंत्रित किया गया। विज्ञान संचार के क्षेत्र में आपके योगदान का संज्ञान लेते हुए यूरोप के सबसे बड़े विज्ञान कार्यक्रम यूरोपियन साइंस ओपन फोरम 2006 में आपको संपूर्ण व्यय देकर आमंत्रित किया गया। इसके अलावा, डॉ. नौटियाल की प्रतिभा को देश और विदेश की अनेक संस्थाओं ने सम्मानित भी किया है। वैसे तो डॉ. नौटियाल जुलाई 2016 में सेवानिवृत्त हुए हैं मगर वे उसके बाद विज्ञान संचार की गतिविधियों में पहले से ज्यादा सक्रिय हो गये हैं।

अपनी पॉकेट मनी से भी विज्ञान की किताबें ही लेता था। घर पर हम स्वयं ही प्रयोग भी करते थे पेरिस्कोप और प्रोजेक्टर बनाना, कॉपर सल्फेट (नीला तूतिया) के विलयन में डाल कर लोहे की कील पर ताँबे की पर्त चढ़ाना, पिनहोल कैमरा बनाना, पानी में डुबा कर कैंची से कांच काटना, गत्ते की ट्यूब और धागे से टेलीफोन साबुन लगा कर या तेल की बूँद के उपयोग से पानी में कागज की मछली तैराना, पानी की बूँद का लेंस की तरह उपयोग करके माइक्रोस्कोप बनाना हमारे शौक थे। विज्ञान, विज्ञान प्रगति, वैज्ञानिक जैसी पत्रिकाएं देखना अच्छा लगता था।

आपकी पारिवारिक पृष्ठभूमि और शिक्षा के बारे में हमारे पाठकों को संक्षेप में बताएं।

हमारा परिवार मूलतः उत्तराखंड (गढ़वाल) से है। मेरा जन्म मेरठ में हुआ। मेरे दादा जी ब्रिटिश काल में तथा स्वाधीनता के बाद भी बस्ती, बरेली, पीलीभीत, बदायूं, श्रीनगर आदि के राजकीय विद्यालय में प्रधानाध्यापक तथा कुछ समय इंस्पेक्टर ऑव स्कूल्स रहे थे (बस्ती में विद्यालय के शताब्दी वर्ष के कार्यक्रम में मैंने डॉ. कलाम को बोर्ड पर दादाजी का नाम दिखाया!)। जैसा मैंने उनके विद्यार्थियों के माध्यम से जाना (जिनमे मुख्यमंत्री, कुलपति आदि भी थे), वे असाधारण व्यक्तित्व के थे। वे मूलतः अंग्रेजी के अध्यापक थे (शायद गढ़वाल क्षेत्र के पहले ग्रेजुएट) पर हिंदी और राष्ट्रीयता के परम समर्थक। ये संस्कार परिवार में रहे। उन्होंने देश के स्वाधीन होने पर अंग्रेजी का उपयोग न करने की शपथ ली थी और पेंशन के कागजों पर हिंदी में हस्ताक्षर करके अस्थायी असुविधा भी झेली पर डाकघर एवं अन्य अधिकारियों ने हस्ताक्षर प्रमाणित करके समस्या हल कर दी। वे अपने बच्चों के सरकारी नौकरी में जाने देने के बिलकुल इच्छुक नहीं थे (उनके निधन के बाद एक चाचाजी सरकारी सेवा में गए)। इसलिए मेरे एक ताऊ जी चित्रकार (लखनऊ से), दो ताऊजी चिकित्सक तथा पिताजी भी चित्रकार तथा बाद में छायाचित्रकार बने। पंजाब के राज्यपाल से उन्हें स्वर्णपदक भी मिला था। उनका स्टूडियो पश्चिमी उत्तर प्रदेश का सबसे प्रतिष्ठित स्टूडियो रहा एवं वे नॉर्थन इण्डिया फोटोग्राफिक सोसायटी के संयुक्त सचिव थे। वे सदैव सामाजिक कार्यों से जुड़े रहे तथा विवेकानंद शिला स्मारक समिति के कोषाध्यक्ष भी रहे। उनका शिक्षा क्षेत्र से निरंतर जुड़ाव रहा तथा वे दशाब्दियों अनेक संस्थाओं जैसे सरस्वती शिशु मंदिर, सरस्वती विद्या मंदिर की प्रबंध समितियों के अध्यक्ष आदि रहे। उन्होंने देवनागरी स्नातकोत्तर विद्यालय तथा मेरठ विश्वविद्यालय में फोटोग्राफी भी पढ़ाई। अतः घर में कलात्मक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक वातावरण रहा। मैं सरस्वती शिशु मंदिर, राजकीय इंटर कॉलेज में पढ़ा तथा देवनागरी कॉलेज से भौतिकी से बी.एससी ऑनर्स करके रुड़की विश्वविद्यालय (अब आईआईटी) से एम.एससी. किया। मैं मूलतः भौतिकविद हूँ। भौतिक अनुसन्धान प्रयोगशाला, अहमदाबाद में मैंने प्रो. एम.एन.राव के निर्देशन में प्रो. देवेंद्र लाल के ग्रुप में शोध कार्य किया। वहाँ मैं नासा के प्रोजेक्ट में वैज्ञानिक सहकर्मी रहा। मेरे शोध कार्य में समस्थानिक (आइसोटोप) एक कॉमन थ्रेड रहा है।

आप प्रारंभ से ही एक बहुमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति रहे हैं। आपने अध्ययन के लिए विज्ञान को ही क्यों चुना?

मैं विज्ञान का शौकीन था। जिज्ञासु था (जैसा स्कूल की रिपोर्ट में भी लिखा जाता था), अपनी पॉकेट मनी से भी विज्ञान की किताबें ही लेता था। घर पर हम स्वयं ही प्रयोग भी करते थे पेरिस्कोप और प्रोजेक्टर बनाना, कॉपर सल्फेट (नीला तूतिया) के विलयन में डाल कर लोहे की कील पर ताँबे की पर्त चढ़ाना, पिनहोल कैमरा बनाना, पानी में डुबा कर कैंची से कांच काटना, गत्ते की ट्यूब और धागे से टेलीफोन साबुन लगा कर या तेल की बूँद के उपयोग से पानी में कागज की मछली तैराना, पानी की बूँद का लेंस की तरह उपयोग करके माइक्रोस्कोप बनाना हमारे शौक थे। विज्ञान, विज्ञान प्रगति, वैज्ञानिक जैसी पत्रिकाएं देखना अच्छा लगता था। मैं स्वतन्त्र व्यक्तित्व का था, जिज्ञासु था और मुझे लगा कि विज्ञान के क्षेत्र में रचनात्मकता तथा वांछित स्वाधीनता दोनों मिलेंगे। पढ़ाई में अच्छा होने के कारण प्रवेश भी अच्छी संस्थाओं में मिलता चला गया।

आप राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक रहे हैं। वैज्ञानिक शोध में आपके महत्वपूर्ण योगदान के विषय में हम जानना चाहेंगे।

आरम्भ में मेरा कार्य मास स्पेक्ट्रोमेट्री के उपयोग से चन्द्रमा से आए नमूनों एवं उल्काओं के समस्थानिक - विश्लेषण का था जिसके आधार पर हमने सूर्य से निकले वाली सौर पवन, ऊर्जावान कणों तथा अंतरिक्ष किरणों की नाभिकीय अभिक्रियाओं से बने समस्थानिकों में अंतर को समझा। उपग्रह से किए प्रयोगों के आधार पर कहा गया था कि सूर्य से निकली ऊर्जावान कणों में नियॉन के समस्थानिक उसी अनुपात में हैं जिस में 'प्लेनेटरी' कहे जाने वाले पदार्थों में। हमारे निष्कर्ष भिन्न थे। आरम्भ में तो हमारा विचार नहीं माना गया परंतु 1983 की

अंतर्राष्ट्रीय कॉस्मिक-रे कॉनफेरेन्स होने तक शिकागो विश्वविद्यालय तथा कैलटेक के विज्ञानियों ने भी मान लिया कि दीर्घकालीन आधार पर हम सही थे। बीरबल साहनी पुरावनस्पति विज्ञान संस्थान (2016 से पुराविज्ञान संस्थान) में मैंने कॉस्मिक किरणों से वायुमंडल में बने रेडियोकार्बन समस्थानिक के मापन से रेडियोकार्बन आयुनिर्धारण का उपयोग करके पूर्व काल की जलवायु एवं सभ्यताओं के परिवर्तनों के काल निर्धारण का कार्य किया। इससे अनेक रोचक तथ्य उजागर हुए। पता चला कि प्रतिकूल जलवायु के गुजरात में चार हजार वर्ष से पूर्व भी साल में दो फसल निकाली जाती थीं। उत्तर-पूर्व भारत, तथा गंगा के मैदान की जलवायु के परिवर्तन के अध्ययन के परिणाम अच्छी अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में छपे।

आप उत्कृष्ट संस्थाओं में पढ़े हैं, अच्छे विद्यार्थी रहे। वैज्ञानिक शोध के साथ-साथ विज्ञान संचार की ओर आपका झुकाव कैसे हुआ? आपने विज्ञान संचार कैसे सीखा?

स्कूली जीवन में मैं विज्ञान पर लिखता था। मजेदार बात यह है कि गंभीर विज्ञान संचार में मेरा पहला कदम पड़ा जब भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के प्रांगण में हम युवा वैज्ञानिक पदक प्राप्त करने के उपरान्त राष्ट्रपति भवन जाने की तैयारी कर रहे थे। दिल्ली आकाशवाणी के युवा रिपोर्टरों के आग्रह पर भी हिंदी में बोलने को कोई तैयार नहीं हुआ, अकेले मैं था जो सहमत हो गया। यह रेडियो पर मेरा पहला प्रसारण था।

वर्ष 1993 में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के साथ मेरे जुड़ाव से मेरा सुखद संपर्क डॉ. नरेंद्र सहगल से हुआ। मैं एनसीएसटीसी नेटवर्क का संयोजक भी बना जिसके अध्यक्ष प्रो. यशपाल थे। अनुज सिन्हा जी की पहल से मैं साइंस कांग्रेस के लखनऊ सत्र में बच्चों के लिए विज्ञान सत्र का समन्वयक बना। धीरे-धीरे लखनऊ विश्वविद्यालय, भारतीय भू-सर्वेक्षण उत्तर प्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् आदि एवं मैटीरियल रिसर्च सोसायटी जैसे अन्य वैज्ञानिक संगठन भी मुझे अपने विज्ञान कार्यक्रमों से जोड़ने या उनमें सहयोग हेतु आमंत्रित करने लगे।

वर्ष 1993 में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के साथ मेरे जुड़ाव से मेरा सुखद संपर्क डॉ. नरेंद्र सहगल से हुआ। मैं एनसीएसटीसी नेटवर्क का संयोजक भी बना जिसके अध्यक्ष प्रो. यशपाल थे। अनुज सिन्हा जी की पहल से मैं साइंस कांग्रेस के लखनऊ सत्र में बच्चों के लिए विज्ञान सत्र का समन्वयक बना। धीरे-धीरे लखनऊ विश्वविद्यालय, भारतीय भू सर्वेक्षण उत्तर प्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् आदि एवं मैटीरियल रिसर्च सोसायटी जैसे अन्य वैज्ञानिक संगठन भी मुझे अपने विज्ञान कार्यक्रमों से जोड़ने या उनमे सहयोग हेतु आमंत्रित करने लगे। शिक्षा संस्थाओं, आंचलिक विज्ञान नगरी आदि की विज्ञान गतिविधियों तथा प्रबंधन से जुड़ाव बढ़ा। जब 2006 में प्रो.सी.एन. आर.राव, डॉ. आर.ए.माशेलकर एवं प्रो. विजयन के लोकप्रिय व्याख्यान हुए तो उनके आयोजन एवं डॉक्यूमेंटेशन/प्रकाशन का दायित्व मुझे दिया गया। धीरे-धीरे मेरी विज्ञानी के साथ-साथ विज्ञान संचारक वाली पहचान और पुख्ता हो गई। एनसीएसटीसी एवं विज्ञान प्रसार के अब तक के सब प्रमुखों से मेरा अच्छा संपर्क रहा जिनमें डॉ. विनय बी.कांबले, डॉ. भानु प्रताप सिंह एवं डॉ. गोपीचंद्रन भी हैं। विज्ञान परिषद् प्रयाग के डॉ. शिवगोपाल मिश्र ने मुझे परिषद् से जोड़ा।

वर्ष 1995 में पूर्ण सूर्य ग्रहण के समय दूरदर्शन ने इलाहाबाद में इरादतगंज से भी उसका सीधा प्रसारण करने का निर्णय लिया। मैं लखनऊ केंद्र की सर्वप्रिय पसंद रहा और मुझे आँखों देखा हाल देने के लिए इलाहाबाद भेजा गया। दिल्ली में प्रो. यशपाल स्टूडियो में थे। इलाहाबाद में डॉ. जयंत विष्णु नार्लीकर थे। दूरदर्शन के निदेशक आर.के. सिन्हा साहब वहाँ थे जो काफी प्रभावित हुए। लौट कर उन्होंने सहायक निदेशक श्रीमती जलाल से कहा कि आप साइंस मैगजीन आरम्भ करें और डॉ. नौटियाल को उसमें जोड़ें। इसके बाद काफी समय तक मैंने साइंस मैग्जीन की जिसमे आधे घंटे के सर्ग में एक वृत्तचित्र, एक छोटा साक्षात्कार और 5 मिनट का विज्ञान समाचार थे और तीनों मैं ही करता था। कार्यक्रम बहुत सफल रहा लेकिन जब शनिवार और इतवार को रिकॉर्डिंग बंद हो गई तो मेरा भी दूरदर्शन से नाता लगभग टूट गया। हाँ बीच-बीच में ई-टीवी, दूरदर्शन, स्टार आदि आकर बाइट रिकॉर्ड करके दिखा देते थे। संस्थान के कुछ वृत्तचित्र बने तो मैंने आलेखन और नेपथ्य से पढ़ने का कार्य किया। ई-टीवी से निमिष कपूर जी के माध्यम से तथा कुछ में परिचय के कारण प्रायः वैज्ञानिक सोच तथा अंधविश्वासों से जुड़े मुद्दों पर बाइट जाना सामान्य बात हो गई थी। उस समय स्वतंत्र भारत के (बाद में संपादक, हिंदुस्तान) नवीन जोशी जी ने स्नेहिल आग्रह कर के 3 अंकों के लिए जीवन के आरम्भ और विकास पर लेख लिखवाए।

अनेक वर्ष बाद पिछले 2-3 वर्षों में फिर से मैं दूरदर्शन गया जिनमें से कुछ विज्ञान दिवस पर थे, कुछ कार्यक्रम भूकंप, कुछ डॉ. कलाम तथा कुछ ऊर्जा एवं हिग्स बोसॉन से संबंधित थे। पहचान बनने का लाभ हुआ कि रूस, दक्षिण अफ्रीका, जर्मनी आदि में व्याख्यान देने/ भ्रमण हेतु मुझे आमंत्रित किया गया।

कौन लिखे इसके लिए नियम तो नहीं बनाया जा सकता। अच्छी संचार क्षमता वाला विज्ञानी अथवा अच्छा विज्ञान समझने लिखने वाला लेखक/पत्रकार दोनों सशक्त विज्ञान लेखक हो सकते हैं। आदर्श स्थिति तो वह है जब विषय का जानकार या विशेषज्ञ ही आम व्यक्ति के लिए लिखे। ऐसे में विषय की व्याख्या गलत नहीं होती। पर इसके लिए उसकी संचार क्षमता अच्छी होना अनिवार्य है जो प्रायः अपवाद है। परंतु विषय को न जानने वाले कभी–कभी विषय वस्तु में गलती कर देते हैं।

एक बार प्रो.यश पाल लखनऊ आए, शायद 1995 की बात है। हम उन्हें उत्तर प्रदेश बाल कांग्रेस में आमंत्रित करना चाहते थे। मालूम नहीं उन्हें याद होगा या नहीं, मैं उनसे मिलने मिलने क्लार्क–अवध होटल गया। वे डॉ. नित्यानंद की प्रतीक्षा कर रहे थे जिससे मुझे समय मिल गया। बातों ही बातों में यह जानने पर कि मेरी लेखन में रूचि है, उन्होंने कहा टर्निंग पॉइंट के लिए लिख सकते हो? मैंने कहा मुझे नहीं पता कि टी.वी.स्क्रिप्ट कैसे लिखते हैं। उन्होंने कहा, उसमें क्या है! कागज में एक तरफ विजुअल लिखो, दूसरी तरफ ऑडियो! टर्निंग पॉइंट के लिए मैं कभी नहीं लिख पाया परंतु लखनऊ दूरदर्शन और रेडियो के लिए आलेखन किया। अब भी मैं कार्यशालाओं में आलेखन पढ़ाता हूँ तो हमेशा इस मन्त्र को याद करता हूँ! आलेखन तथा फोटोग्राफी एवं वृत्तचित्र बनाने पर फोकल जैसे प्रकाशकों की पुस्तकें भी पढ़ीं। पर मुख्यतः विज्ञान मैंने संचार प्रयोग कर–कर के सीखा।

आपको पूर्णकालिक वैज्ञानिक के रूप में कार्य करते हुए विज्ञान संचार के क्षेत्र में योगदान करने में कोई परेशानी नहीं हुई?

अगर आप टीवी परदे पर दिखाई देते हैं, पत्र–पत्रिकाओं में आपका नाम आता है तो आपको अधिक सतर्क रहना पड़ता है। पर मैं तो अधिक समय संस्थान में रहता था, अवकाश के दिनों में भी, इसलिए कुछ समय के बाद इस कारण तो कोई परेशानी नहीं हुई। हाँ, एक दौर में जब मुझे एक खराब उपकरण चलाने के लिए दे दिया गया तब थोड़ा परेशानी हुई। यह कहना बहुत आसान था कि उपकरण को उतना ध्यान नहीं मिल पा रहा है। सौभाग्य से अनेक विशेषज्ञों ने स्पष्ट रूप से उस उपकरण की गुणवत्ता पर प्रतिकूल मौखिक 'प्रमाणपत्र' देकर मेरी नैतिक समस्या को हल कर दिया यद्यपि मेरे उससे मेरी व्यावसायिक हानि फिर भी बहुत हुई। सच तो यह है कि उन परिस्थितियों में विज्ञान संचार की गतिविधि ने मेरा आत्मविश्वास बनाए रखने में मेरी सहायता की। अपने लिखने बोलने की क्षमता के उपयोग से संतोष भी रहा।

आपके मत में एक वैज्ञानिक अधिक अच्छा संचारक होगा या एक पत्रकार?

कौन लिखे इसके लिए नियम तो नहीं बनाया जा सकता। अच्छी संचार क्षमता वाला विज्ञानी अथवा अच्छा विज्ञान समझने लिखने वाला लेखक/पत्रकार दोनों सशक्त विज्ञान लेखक हो सकते हैं। आदर्श स्थिति तो वह है जब विषय का जानकार या विशेषज्ञ ही आम व्यक्ति के लिए लिखे। ऐसे में विषय की व्याख्या गलत नहीं होती। पर इसके लिए उसकी संचार क्षमता अच्छी होना अनिवार्य है जो प्रायः अपवाद है। परंतु विषय को न जानने वाले कभी–कभी विषय वस्तु में गलती कर देते हैं। एक कहावत है कि there is nothing like clear image of a fuzzy object। लेखक को स्वयं विषय स्पष्ट नहीं होगा तो पाठक को कैसे करा पाएगा? मेरे मत में यदि विषय दुरूह है तो विशेषज्ञ द्वारा या उसके साथ समन्वयन करके लिखना अधिक प्रभावी होगा। कुछ लेखक प्रयास करके इन अड़चनों को पार कर लेते हैं, कुछ कच्चा–पक्का परोसते हैं! विशेषज्ञों में फ्रांसिस क्रिक एवं जेम्स वाटसन, तथा जानकारों में पॉल डेवीज तथा जॉन ग्रिबिन इसके उदाहरण हैं जिनका लेखन उत्कृष्ट है। डॉ. नार्लीकर ने गुरुत्व पर The Lighter Side of Gravity जैसी अच्छी पुस्तक तथा विज्ञान कथाएं लिखी हैं। प्रो. यश पाल तथा डॉ. राहुल, दोनों मूलतः विज्ञानी हैं, पर उन्होंने आम बच्चे के मन में उमड़ने–घुमड़ने वाले प्रश्नों को अपनी पुस्तक में पिरोया है। डॉ.डी बालसुब्रणयन ने सामान्य पाठक के लिए काफी लिखा है। और उदाहरण भी हैं। बिमान बसु जी व्यवसाय से शोधकर्ता नहीं है पर इतना अच्छा, सरल और सही लिखते हैं!

प्रायः विज्ञान के विद्यार्थी साहित्य और भाषा पक्ष से उतने बेहतर नहीं माने जाते। पर आपने तो विज्ञान पर आधारित कविताएं भी लिखी हैं ! आप विज्ञान संचार की कार्यशालाओं में असंख्य नवांकुर विज्ञान संचारकों को प्रशिक्षण दिया है। यह तालमेल कैसे किया आपने?

मेरी स्कूली शिक्षा सरस्वती शिशु मंदिर में हुई। यहाँ हिंदी का स्तर तो उत्कृष्ट था ही, अंग्रेजी का भी अच्छा था। मैंने पहली कविता चौथी कक्षा में लिखी और पांचवी कक्षा में पत्रिका में कार्टून कथा भी छापी! पांचवीं कक्षा में मैंने स्कूल के कार्यक्रम का आँखों–देखा हाल भी सुनाया जिसमें थोड़ी देर के बाद मैंने दी गई स्क्रिप्ट को एक ओर रख कर स्वयं बोलना आरम्भ कर दिया। मैं पढ़ने का भी बहुत शौकीन था। मेरे

पिता जी ने इसमें मुझे बहुत प्रोत्साहित भी किया। वे विशेषतः विज्ञान की किताबें मुझे खरीद कर देते थे पर केवल उनसे मेरा क्या होता? आखिर उन्होंने मुझे 8-9 वर्ष की आयु में जिला पुस्तकालय का सदस्य बनवा दिया। 4 साल बाद मैं पुस्तकालय अध्यक्ष के पास पहुँच गया कि मैंने चिल्ड्रन सेक्शन की सब किताबें पढ़ ली है, अब क्या करूँ? पेशोपेश में पड़े मोहम्मद हसन साहब ने मेरा संक्षिप्त इंटरव्यू लिया, संतुष्ट हुए और लाल कलम से मेरे कार्ड पर लिखा-इन्हें एडल्ट सेक्शन की किताबें इशू कर दी जाएं। यह पुस्तकालय के इतिहास की संभवतः अकेली ऐसी घटना होगी। तब आरटीआई आदि का डर नहीं था! आज शायद कोई ऐसा साहस न कर पाए। पर यह सरल नहीं था। मुझे अन्य विद्यार्थियों की तुलना में कहीं अधिक परिश्रम करना पड़ता था। हमारा विद्यालय (राजकीय इंटर कॉलेज) मेरठ का सर्वश्रेष्ठ विद्यालय था। बहुत गतिविधियां होती थीं और उनसे हमने बहुत कुछ सीखा। पढ़ने का यह शौक संभवतः मेरे भाषा पक्ष को समृद्ध करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा। मैं 7 वर्ष क्लास मैग्जीन, फिर पीजी कालेज तथा फिर रुड़की विश्वविद्यालय की पत्रिकाओं का संपादक रहा।

आपने एक कुशल विज्ञान संचारक के रूप में मुद्रित, रेडियो और टेलीविजन जैसे सभी माध्यमों में काम किया है। आपका कैसा अनुभव रहा है?

मुझे इन सभी संचार माध्यमों में काम करते हुए बहुत आनंद मिला पर पत्र-पत्रिकाओं से अधिक मैंने टीवी और रेडियो के लिए लिखा है। शायद एक कारण यह रहा कि उनमें हाँ कहने के बाद डेडलाइन होती थी। पत्र-पत्रिकाओं में प्रायः मैंने आग्रह के दबाव में ही लिखा! इनके अतिरिक्त मैंने श्रोताओं के साथ सीधे संवाद तथा व्याख्यान देने के आनंद को भी अनुभूत किया है, करीब 700 व्याख्यान दिए हैं। इसमें सभी वर्गों के श्रोता रहे-12वीं कक्षा तक के विद्यार्थी, स्नातक, परास्नातक, शोध छात्र, कालेज/विश्वविद्यालय के शिक्षक, प्रशासक और ग्रामीण लोग भी।

विज्ञान संचारक के रूप में आपके कुछ रोचक अनुभव?

लखनऊ से मैंने उत्तरायण कार्यक्रम में 1990 से 2016 तक 25 से अधिक वर्ष तक वार्ताएँ प्रस्तुत की। आरंभ गढ़वाली में विज्ञान वार्ताओं से हुआ। पहली बार जब मैं अनुबंध पत्र मिलने के बाद आकाशवाणी पहुँचा तो मैं हिंदी में आलेख लेकर गया था। कार्यक्रम अधिशासी जरधारी जी को दिखाया तो उन्होंने कहा, यह तो हिंदी में है गढ़वाली में होना चाहिए था। उन्होंने अनुबंधपत्र में विषय के आगे कोष्ठक में लिखे शब्द दिखाए -ग.वा. यानी गढ़वाली वार्ता! कोई चारा नहीं था, पर उन्होंने समस्या को समझकर इस शर्त के साथ अनुमति दी कि अगली बार गढ़वाली में लिख कर लाऊंगा। तीन महीने बाद मैंने जब गढ़वाली में अपनी वार्ता रिकार्ड कराई तो नर्वस था लेकिन बाद में मालूम हुआ कि उसे पसंद किया गया है, मुझे यह जानकर खुशी हुई। उसके बाद मेरी वार्तायें लखनऊ के साथ-साथ शार्ट वेव पर नजीबाबाद से भी प्रसारित हुईं। अगले वर्ष दूरदर्शन से निमंत्रण मिला। इस पहली वार्ता में मेरी सारी परीक्षायें हो गईं ! एयर कंडीशनर खराब होने के कारण रिकॉर्डिंग हो नहीं पाई। कम्पीयर अनुपस्थित थे पर प्रोग्राम लग चुका था लिहाजा कैमरे में देखकर अकेले बोलना था ! मैं बिलकुल सहज नहीं था। विषय था हमारा सौर मंडल। इस अनुभव के बाद फिर धीरे-धीरे मैं दूरदर्शन का नियमित वार्ताकार, ऐंकर, आलेखक और यहाँ तक कि नेपथ्य से वाचक तथा कमेंटेटर भी बन गया।

आज समाज के सामने जो चुनौतियाँ हैं, उनमे से सबसे महत्त्वपूर्ण है तार्किक सोच का अभाव। यह हमारी अनेक सामाजिक समस्याओं का भी कारण है। वैज्ञानिक सूझबूझ के विकास से समाज में अंधविश्वास उन्मूलन होता है। यदि हम लोगों को बतायें कि गांगेय डॉल्फिन जन्म से अंधी होती हैं तो वे इस अफवाह पर विश्वास नहीं करेंगे कि नरोरा के नाभिकीय संयत्र से निकले अपशिष्ट पदार्थों के कारण गंगा का जल प्रदूषित हुआ जिससे डॉल्फिन अंधी हो गईं! लोगों की जिज्ञासा को शांत करके उन्हें घटनाओं को तर्कसंगत ढंग से समझाना विज्ञान संचार का मकसद है।

आपकी दृष्टि में विज्ञान संचार क्यों महत्त्वपूर्ण है?

आज समाज के सामने जो चुनौतिाँ हैं, उनमे से सबसे महत्त्वपूर्ण है तार्किक सोच का अभाव। यह हमारी अनेक सामाजिक समस्याओं का भी कारण है। वैज्ञानिक सूझबूझ के विकास से समाज में अंधविश्वास उन्मूलन होता है। यदि हम लोगों को बतायें कि गांगेय डॉल्फिन जन्म से अंधी होती हैं तो वे इस अफवाह पर विश्वास नहीं करेंगे कि नरोरा के नाभिकीय संयत्र से निकले अपशिष्ट पदार्थों के कारण गंगा का जल प्रदूषित हुआ जिससे डॉल्फिन अंधी हो गईं! लोगों की जिज्ञासा को शांत करके उन्हें घटनाओं को तर्कसंगत ढंग से समझाना विज्ञान संचार

हम मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों दृष्टि से विकसित देशों से बहुत पीछे हैं। हम कॉस्मॉस की टक्कर का कोई कार्यक्रम नहीं बना पाए। विदेशों में स्कूली बच्चों से लेकर शिक्षित वयस्कों के लिए भी संगठन हैं। हमारे यहाँ डाऊशेज म्यूजियम या स्मिथसोनियन जैसा कोई संग्रहालय नहीं हैं। यद्यपि भारत के राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् (एनसीएसएम) का इस दिशा में अवश्य अच्छा योगदान है। ईमानदारी से विज्ञान-संचार प्रतिभाओं को पहचाने जाने की भी आवश्यकता है। जो शोध नहीं कर सकता, उससे विज्ञान संचार करा लें वाली सोच से उद्धार नहीं होगा। इसी तरह जो शोध अच्छी करेगा, विज्ञान संचार भी अच्छा करेगा, यह अनिवार्य नहीं है।

का मकसद है। इससे नवीन प्रौद्योगिकियों को स्वीकार या अस्वीकार करने संबंधी निर्णय लेने में आम जन सक्षम बनता है। दैनिक जीवन के लिए तो आपका कुछ विज्ञान-प्रौद्योगिकी जानना अनिवार्य है ही !

क्या भारत में विज्ञान संचार की स्थिति संतोषजनक है? आज हमारे देश में विज्ञान संचार के सामने क्या मुख्य चुनौतियां हैं? आप किन कार्यक्रमों को देश में विज्ञान संचार के लिए महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानेंगे?

पिछले कुछ वर्षों में इस ओर संख्यात्मक सुधार हुआ है पर स्तर में वांछित परिवर्तन नहीं आया है। वैसे हमारे देश में राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, एनसीएसएम, विज्ञान प्रसार, निस्केयर जैसे संगठन सक्रिय हैं। अधिकांश प्रदेशों में विज्ञान प्रौद्योगिकी परिषद् तथा गैर-सरकारी संगठन भी सक्रिय हैं लेकिन मुझे लगता है कि उनमें कहीं न कहीं वांछित पैशन की कमी है। दूसरे देशों में रचा जा रहा लोकविज्ञान साहित्य सभी वर्गों के लिए अलग-अलग हैं जबकि हमारे यहाँ हम मुख्यतः कम आयु वर्ग को ही लक्ष्य कर रहे हैं। विषय-वस्तु (content) तथा पैकेजिंग दोनों महत्त्वपूर्ण है।

मुझे लगता है 1995 में पूर्ण सूर्यग्रहण का सीधा प्रसारण क्रांतिकारी कदम था। यह उस वर्ष के सबसे अधिक देखे गए 10 कार्यक्रमों में था। मुझे नहीं लगता कोई और विज्ञान कार्यक्रम लोकप्रियता के इस स्तर को छू पाया है। उसके बाद शुक्र पारगमन काफी देखा गया। संयोग से मैं इन दोनों घटनाओं के प्रसारण से जुड़ा रहा। टर्निंग पॉइंट एक और उच्च स्तरीय कार्यक्रम था। रेडियो पर 'मानव का विकास' भी उत्कृष्ट था। ये इसलिए भी देखे गए क्योंकि तब चैनल कम थे। विज्ञान प्रसार द्वारा चलाई गई विज्ञान रेल अपनी प्रस्तुति के अनूठेपन के कारण विशेष तौर पर लोकप्रिय हुई। विज्ञान प्रसार के विपनेट क्लब, पुस्तक प्रकाशन, विज्ञान फिल्म जैसे प्रयासों में काफी संभावनाएं हैं। देश की अनेक विज्ञान पत्रिकाएं अच्छी हैं पर अधिकांश संसाधनों के अभाव से जूझ रही हैं।

विज्ञान संचार के क्षेत्र में विदेशों की तुलना में हम कहाँ पर खड़े हैं? इस स्थिति को कैसे बेहतर किया जा सकता है?

हम मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों दृष्टि से विकसित देशों से बहुत पीछे हैं। हम कॉस्मॉस की टक्कर का कोई कार्यक्रम नहीं बना पाए। विदेशों में स्कूली बच्चों से लेकर शिक्षित वयस्कों के लिए भी संगठन हैं। हमारे यहां डाऊशेज म्यूजियम या स्मिथसोनियन जैसा कोई संग्रहालय नहीं हैं। यद्यपि भारत के राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् (एनसीएसएम) का इस दिशा में अवश्य अच्छा योगदान है। ईमानदारी से विज्ञान-संचार प्रतिभाओं को पहचाने जाने की भी आवश्यकता है। जो शोध नहीं कर सकता, उससे विज्ञान संचार करा लें वाली सोच से उद्धार नहीं होगा। इसी तरह जो शोध अच्छी करेगा, विज्ञान संचार भी अच्छा करेगा, यह अनिवार्य नहीं है। शोध संस्थानों में सोच बदलने की आवश्यकता है। हमें यह बात समझनी होगी कि जनसंपर्क तथा विज्ञान लोकप्रियकरण एक ही नहीं है। एनसीएसएम के केंद्रों को विज्ञान संचार के हब की तरह विकसित करना चाहिए पर इसके लिए वहां अच्छे स्तर के वैज्ञानिक पृष्ठभूमि के और अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता होगी। यह भी समझा जाना चाहिए कि विज्ञान संबंधी लेखन के उद्देश्य भिन्न-भिन्न हो सकते हैं जैसे जानकारी देना, सोच बदलना, जिज्ञासा शांत करना, प्रकृति की व्याख्या करना, जीवन सरल करना, जानकारी के साथ निर्णय लेने में सहायता करना इत्यादि। उद्देश्य तथा लक्षित समूह के सम्बन्ध में सोच की स्पष्टता आवश्यक है। पचास वर्ष पहले की तुलना में आज प्रबुद्ध वर्ग में सक्रियता 65 साल की आयु के बाद भी काफी है और आम तौर पर आर्थिक सम्पन्नता भी। इस ऊर्जा को भी टैप किया जाना चाहिए।

आप हाल में एक वैज्ञानिक के रूप में लम्बी सेवा के बाद बीरबल साहनी पुराविज्ञान अनुसंधान संस्थान (BSIP) से सेवानिवृत्त हुए हैं। आपको देखकर नहीं लगता कि आपकी आयु 60 वर्ष है। सेवानिवृत्ति के बाद आप अपने को कैसे सक्रिय रखते हैं?

वृद्ध न लगने के आनुवंशिक के साथ शारीरिक एवं मानसिक कारण होते हैं। मेरा मानना है कि सोच सकारात्मक और जीवन सरल रखना चाहिए। मैं अब भी काफी सक्रिय हूँ। सेवानिवृत्ति के बाद समय के बंधन कम हो गए हैं जिससे रचनात्मक कार्य अधिक हो पा रहे हैं। इस वर्ष

3 शोधपत्र प्रकाशित हुए हैं और पत्र-पत्रिकाओं एवं रेडियो, टी.वी. के लिए लेखन चल रहा है। उत्तर प्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद सहित देश की अनेक लोकविज्ञान संस्थाओं की कई समितियों से जुड़ा हूँ। इस साल 30 से अधिक व्याख्यान देश के अनेक हिस्सों में दिए हैं। एक पी-एच.डी. प्रबंध का मूल्यांकन कर रहा हूँ तथा एक विश्वविद्यालय के बोर्ड ऑफ स्टडीज जैसे शैक्षिक सहयोग भी दे रहा हूँ। उत्तर प्रदेश की शैल चित्र समिति का संयोजक हूँ। विज्ञान प्रसार और एनसीएसटीसी की कुछ फिल्म तथा लेखन प्रशिक्षण कार्यशालाओं से जुड़ा हूँ। इन सब के बीच एक विज्ञान पुस्तक का लेखन भी चल रहा है। पिछले एक महीने में ही 8 व्याख्यान दे चुका हूँ, अनेक प्रदर्शनी में प्रोजेक्ट चयन, चयन समिति आदि रचनात्मक कार्यों में व्यस्त रहा हूँ। कुल मिलाकर कहूँ तो मेरी व्यस्तता बिलकुल कम नहीं हुई है!

सोशल मीडिया के माध्यम से विज्ञान संचार के प्रसार और प्रभाव पर आपके क्या विचार हैं?

सोशल संचार माध्यम बहुत प्रभावी हैं पर विज्ञान के लिए इसके उपयोग में हम पिछड़ रहे हैं। यद्यपि कुछ ऐसी साइट हैं जिनको बहुत लोग देख रहे हैं। मुझे लगता है कि सरल संवाद के इस युग में किसी संस्था के द्वारा वैज्ञानिकों एवं विज्ञान संचारकों को एक मंच पर लाकर उनके ज्ञान को दूसरे लोगों को उपलब्ध करना चाहिए। ऐसे बहुत से अवकाश प्राप्त या फ्री-लांस विशेषज्ञ होंगे जो जुड़ना चाहेंगे। नेट पर 'यूनिवर्स टुडे', 'हाव स्टफ वर्क्स' जैसी साइट हैं तो नासा तथा अमरीकी वैज्ञानिक सर्वे जैसी सरकारी संस्थाओं के भी वेबसाइट हैं। हम काफी पीछे हैं। इसमें शोध संस्थानों की भूमिका महत्वपूर्ण है। जिस भी संस्था में संग्रहालय है उसे वर्चुयल रूप में संस्था की वेबसाइट पर होना चाहिए। इस संबंध में सम्बद्ध मंत्रालय-विभाग अपने अधीन संस्थाओं को निर्देश दे सकते हैं।

भारतीय विज्ञान संचार के भविष्य को आप किस तरह देखते हैं?

मुझे आशा है कि निराशा हाथ नहीं लगेगी ! पर केवल संचारकों को अधकचरा प्रशिक्षण देकर काम नहीं चलने वाला है। गहन प्रशिक्षण तथा रोजगार के अवसर बढ़ाना भी आवश्यक है।

देश के युवा वैज्ञानिकों और विज्ञान संचारकों के लिए आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

विज्ञान संचार समाज की चिंतन तथा बौद्धिक क्षमता में इजाफा करता है। अगर वैज्ञानिक हैं तो जुनून के साथ शोध करिए। अगर मन से करेंगे तो उसमें मजा आएगा और नतीजे के रूप में देश की वैज्ञानिक प्रगति होगी। आप चाहे शोधकर्ता हैं या संचारक, समाज के लिए अपना कर्तव्य समझते हुए विज्ञान लोगों तक भी ले जाइए। यदि लोगों से आप अपने शोध की बात करेंगे तो समय व्यर्थ नहीं होगा, बल्कि उस शोध को व्यापक परिप्रेक्ष्य में समझने का अवसर मिलेगा। बिना प्रतिफल की आशा के विज्ञान संचार कीजिए। यह आप पर समाज का ऋण है जो आपको चुकाना चाहिए और सरकार के लिए भी : विज्ञान संचार की प्रतिभाओं को ईमानदारी से पहचाने जाने की भी आवश्यकता है। प्रतिभाएं केवल महानगरों में नहीं होतीं !

सोशल संचार माध्यम बहुत प्रभावी हैं पर विज्ञान के लिए इसके उपयोग में हम पिछड़ रहे हैं। यद्यपि कुछ ऐसी साइट हैं जिनको बहुत लोग देख रहे हैं। मुझे लगता है कि सरल संवाद के इस युग में किसी संस्था के द्वारा वैज्ञानिकों एवं विज्ञान संचारकों को एक मंच पर लाकर उनके ज्ञान को दूसरे लोगों को उपलब्ध करना चाहिए। ऐसे बहुत से अवकाश प्राप्त या फ्री-लांस विशेषज्ञ होंगे जो जुड़ना चाहेंगे। नेट पर 'यूनिवर्स टुडे', 'हाव स्टफ वर्क्स' जैसी साइट हैं तो नासा तथा अमरीकी वैज्ञानिक सर्वे जैसी सरकारी संस्थाओं के भी वेबसाइट हैं। हम काफी पीछे हैं। इसमें शोध संस्थानों की भूमिका महत्वपूर्ण है।

mmgore1981@gmail.com

❑❑❑

श्रद्धांजलि

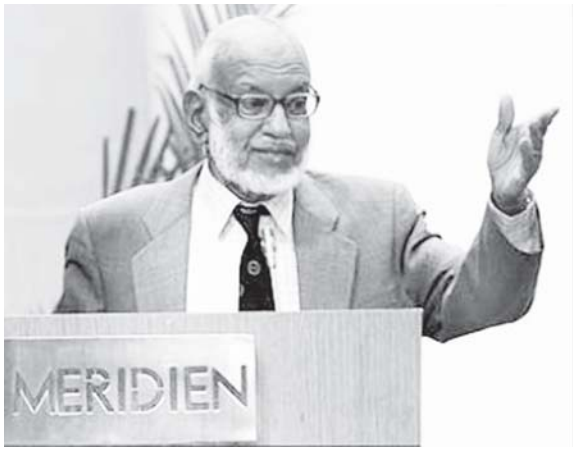

बहुआयामी विरल विज्ञानी

प्रो.एम.जी.के.मेनन

शुकदेव प्रसाद

आज यदि हम विगत शती के चर्चित एवं लब्ध प्रतिष्ठ भारतीय वैज्ञानिकों की सूची बनाएं तो हमें अधिकांश नाम ऐसे मिलेंगे जो टी. आई. एफ. आर. से गहन रूप से सम्बद्ध थे और उन्होंने अपने वैज्ञानिक कैरियर की शुरुआत ही वहीं से की, चाहे प्रो. यशपाल हों, जयंत विष्णु नार्लीकर हों, डॉ. राजा रामण्णा हों या कि होमी सेठना और एम. आर. श्रीनिवासन या कि एम.जी.के.मेनन...।

28 अगस्त, 1928 को मैंगलोर (कर्नाटक) में के.एस.मेनन और श्रीमती एम.नारायणी अम्मा की संतति ने जन्म लिया जिसे प्यार से उसे लोग 'गोलू' बुलाते थे। उस बालक का नाम था एम.जी.के.मेनन, (मम्बिल्लिकलाथिल गोविंद कुमार मेनन), वैज्ञानिक जगत में लोग उन्हें उनके संक्षिप्त नाम एम.जी.के. से ही संबोधित करते थे और वह इसी नाम से लोकप्रिय भी थे।

मेनन ने अपनी आरंभिक शिक्षा गुड शेफर्ड कानवेंट स्कूल (मद्रास), दरबार हाई स्कूल, जोधपुर, जसवंत कालिज, जोधपुर (1942-44) से प्राप्त की, तदुपरांत जसवंत कालिज, जोधपुर (1944-46) से ही बी-एससी. की डिग्री हासिल की। प्रो.एन.आर. तावड़े की देख-रेख में उन्होंने रॉयल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, मुंबई (1946-49) से एम. एससी. की उपाधि अर्जित की।

विज्ञान में परास्नातक की उपाधि अर्जित करने के उपरांत वह शोध करने के लिए ब्रिटेन चले गए। वहां उन्होंने प्रो.सी.एफ.रावेल के निर्देशन (1949-52) में ब्रिस्टल विश्वविद्यालय से पी.एचडी. की और वहीं से (1952-55) तक परा डाक्टोरल संधान भी किए।

मेनन ने जब ब्रिस्टल से पी.एचडी. की उपाधि अर्जित की थी, तब उनकी उम्र मात्र 25 वर्ष की थी। मेनन ने विज्ञान के क्षेत्र में जो भौतिक शोधें की, वे ब्रह्मांडीय किरण भौतिकी (Cosmic Ray Physics) और तात्विक कण उच्च ऊर्जा भौतिकी (Elementary particle high energy Physics) से संबद्ध हैं जिनकी सार्वकालिक महत्ता है और वे अविस्मरणीय हैं। मेनन से पूर्व इन क्षेत्रों में कदाचित ही किसी ने अनुसंधान किया हो, इसकी वैज्ञानिक जन मानस में स्वीकृति है। ऐसे संधान मेनन ने ही पहले-पहल किए थे, जिसकी बदौलत परिवर्ती ऊर्जीय म्यूआनों (Muons), उच्च ऊर्जा आवेशित पाओन (Pions) और इलेक्ट्रानों के अस्तित्व का प्रदर्शन संभव हो सका। बेशक इस संधान यात्रा में एम.डब्ल्यू.फ्रीडलैंडर, डी.कीफे और वॉन रोसुम उनके सहधर्मी थे।

टी.आई.एफ.आर. से शानदार कैरियर की शुरुआत

तरुण विज्ञानी मेनन के आरंभिक शोध कार्यों की विज्ञान जगत में खासी चर्चा हो चुकी थी। भारत के परमाणु पितामह भाभा साहब (डॉ. होमी जहांगीर भाभा) ने उनके कार्यों से प्रभावित होकर उन्हें टाटा आधारभूत अनुसंधान संस्थान (Tata Institute of Fundamental Research, TIFR), मुंबई को ज्वाइन करने का आमंत्रण भेजा जिसे मेनन

ने खुशी-खुशी स्वीकार कर लिया और इस प्रकार उनका विदेश प्रवास समाप्त हुआ और वे उसी वर्ष (1955) स्वदेश लौट आए। डॉ. भाभा गुणग्राही थे, वे प्रतिभाओं को पहचानते थे और खींच-खींचकर उन्हें यहां बुलाते थे। यूं तो यह प्रयोगशाला भाभा साहब की निजी प्रयोगशाला (7, पेडर रोड, मुबई) थी जो टाटा ट्रस्ट के अनुदान से निर्मित (टाटा ट्रस्ट के तत्कालीन अध्यक्ष दोराब जी टाटा उनके सगे मौसा थे) हुई थी। जब पंडित नेहरू को इसकी भनक लगी तो उन्होंने कहा कि यह तो होमी की निजी प्रयोगशाला है, हमें सरकारी क्षेत्र की प्रयोगशाला चाहिए।

फलस्वरूप पं. नेहरू ने देश के आजाद होते ही अगले साल (1948), अपने सहयोगियों के तमाम विरोधों के बावजूद डॉ. भाभा की अध्यक्षता में परमाणु ऊर्जा आयोग का गठन किया और 1954 में परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान (Atomic Energy Establishment) की ट्रांबे, मुंबई में स्थापना की, निस्संदेह डॉ. भाभा ही उसके अध्यक्ष थे। उसी वर्ष परमाणु ऊर्जा विभाग भी स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में आया जिसके सचिव भाभा साहब ही थे। 1966 में एक हवाई दुर्घटना में डॉ. भाभा के त्रासद निधन के बाद श्रीमती इंदिरा गांधी ने अगले वर्ष (1967) डॉ. भाभा की स्मृति को जीवंत बनाए रखने के लिए परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान का नाम बदलकर 'भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र' (Bhabha Atomic Research Centre, BARC) रख दिया। बार्क ही वह संस्था है जो भारत के परमाणु कार्यक्रमों की जननी है।

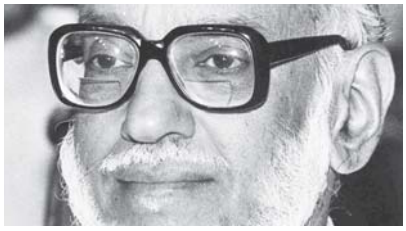

मेनन ने 1955 में रीडर के रूप में टी. आई. एफ. आर. ज्वाइन कर ली जहाँ वे सफलता की एक-एक सीढ़ियाँ चढ़ते हुए क्रमशः सहायक प्रोफेसर, प्रोफेसर, उपनिदेशक बने और अंततः उसके सर्वोच्च पद (निदेशक) के आसन पर जा विराजे। मेनन ने 1955 से लेकर 1975 तक टी. आई.एफ.आर. को अपने सेवाएँ दी और उसे उर्ज्वस्ति भी किया।

आज यदि हम विगत शती के चर्चित एवं लब्ध प्रतिष्ठ भारतीय वैज्ञानिकों की सूची बनाएं तो हमें अधिकांश नाम ऐसे मिलेंगे जो टी.आई.एफ.आर. से गहन रूप से सम्बद्ध थे और उन्होंने अपने वैज्ञानिक कैरियर की शुरुआत ही वहीं से की, चाहे प्रो. यशपाल हों, जयंत विष्णु नार्लीकर हों, डॉ. राजा रामण्णा हों या कि होमी सेठना और एम.आर.श्रीनिवासन या कि एम.जी.के.मेनन... और बहुत से ऐसे विज्ञानी, जिनकी फेहरिस्त लंबी है। टी.आई.एफ.आर. से निकलने के बाद ये सारे लोग अपने-अपने क्षेत्रों में देश के शीर्षस्थ विज्ञानी बने और देश-विदेश में उन्होंने अपार यश अर्जित किया। एम.जी.के. भाग्यशाली थे कि उन्हें भाभा साहब का स्नेहाशीष मिला, जिन्होंने अनगिनतों को अंगुली पकड़कर चलना सिखाया।

स्टेट्समैन ऑफ सायंस : विज्ञान से राजनय तक का सफरनामा

मेनन ने 1955 में रीडर के रूप में टी.आई.एफ.आर. ज्वाइन कर ली जहाँ वे सफलता की एक-एक सीढ़ियाँ चढ़ते हुए क्रमशः सहायक प्रोफेसर, प्रोफेसर, उपनिदेशक बने और अंततः उसके सर्वोच्च पद (निदेशक) के आसन पर जा विराजे। मेनन ने 1955 से लेकर 1975 तक टी.आई.एफ.आर.को अपने सेवाएं दी और उसे उर्ज्वस्ति भी किया। तदुपरांत वे भारत सरकार के नवगठित इलेक्ट्रॉनिकी विभाग में चले गए जहाँ पर वह इलेक्ट्रॉनिकी आयोग के अध्यक्ष, इलेक्ट्रॉनिकी विभाग में भारत सरकार के सलाहकार (1971-78) रहे। 1974-78 तक रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डी.आर.डी.ओ.) के महानिदेशक के रूप में उन्होंने देश के रक्षा उपक्रमों को त्वरा दी। यह वही क्षण थे जब कलाम को उनका मार्गदर्शन और स्नेहाशीष मिला और कालांतर में कलाम भारत के 'मिसाइल मैन' की संज्ञा से आभिहित किए जाने लगे।

1980-81 में वह पर्यावरण विभाग, भारत सरकार के सचिव भी रहे। अतिरिक्त ऊर्जा स्रोत आयोग के अध्यक्ष (1981-82); कैबिनेट की विज्ञान परामर्शदात्री समिति के अध्यक्ष (1982-85); विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के सचिव (1978-82); योजना आयोग, भारत सरकार के सदस्य (1982-89); प्रधानमंत्री (राजीव गांधी) के वैज्ञानिक सलाहकार (1986-89) आदि नाना पदों को सुशोभित करते हुए उन्होंने राष्ट्र को अपनी बहुविध सेवाएं प्रदान की। इतना ही नहीं, जब विश्वनाथ प्रताप सिंह की (अल्पकालीन) सरकार बनी तो उन्हें विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी राज्य मंत्री (1989-90) और शिक्षा राज्य मंत्रिपद (1990) से भी नवाजा गया। प्रो. मेनन 1990 से 1996 तक राज्य सभा सदस्य भी रहे। उनकी इन्हीं उपलब्धियों के कारण उन्हें 'स्टेट्समैन ऑफ सायंस' भी कहा जाता है। तो इस तरह हम देखते हैं कि भाभा साहब के स्नेहामंत्रण से गद्गद तरुण विज्ञानी एम.जी.के.मेनन ने टी.आई.एफ.आर.लैब को ज्वाइन किया, वह उनके लिए शानदार लांच पैड साबित हुई।

यहाँ पर प्रो. मेनन के द्वारा नाना दायित्वों के कुशल निर्वहन के साथ एक और प्रकरण का उल्लेख वांछनीय है जो अपने आप में अपूर्व है। भारत में अंतरिक्ष कार्यक्रम के जनक प्रो. विक्रम अंबालाल साराभाई थुंबा (केरल) में एक राकेट के उड़ान का मार्गदर्शन कर रहे थे। उसी रात (29 दिसम्बर, 1971) उनका त्रासद निधन हो गया, ऐसी संक्रमणकालीन बेला में प्रो. मेनन को 'इसरो' (भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन) के अतिरिक्त अध्यक्ष का पद भार संभालना पड़ा। साथ ही डॉ. साराभाई द्वारा अहमदाबाद में स्थापित पी. आर. एल.

प्रो. मेनन के व्यक्तित्व की एक विशिष्टता यह भी थी कि वे तरुण विज्ञानियों की हौसला अफजाई गर्मजोशी से करते, उनकी प्रतिभा को निखारने में अपना महत्वपूर्ण अवदान देते थे। इस प्रकार उन्होंने अपने जीवन में नाना पदों पर रहते हुए जाने कितने तरुण विज्ञानियों का उत्साहवर्धन, मार्गदर्शन करके उन्हें शीर्षस्थ बना दिया जिन्होंने अपने-अपने संधान क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय यशस्विता अर्जित की और भारत का भाल ऊंचा किया। यहां पर हम मात्र डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की ही चर्चा कर सकेंगे।

(भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला) के सर्वेसर्वा का कार्यभार उन्होंने संभाला। साराभाई द्वारा स्थापित पी.आर.एल. (Physical Research Laboratory) ही भारत में अंतरिक्ष कार्यक्रमों की जननी है। फिर उन्होंने प्रो. सतीश धवन को 'इसरो' की कमान सौंपी। उस समय प्रो. धवन भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलोर थे। कहना न होगा कि प्रो. मेनन ने इस पद के लिए एक ऐसे विज्ञानी का चयन किया जिसने अपने तकनीकीविदों के सहयोग से साराभाई के सपनों में रंग भरा और प्रायः दो दशकों तक वह 'इसरो' के अध्यक्ष के रूप में रहकर देश के अंतरिक्ष कार्यक्रम को बुलंदियों तक पहुंचा दिया। भारत के प्रथम राकेट प्रक्षेपण केंद्र 'शार' (Shreeharikota High Altitude Range SHAR), श्रीहरिकोटा, आंध्र प्रदेश का नामकरण अब सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र (SDSP) करके कृतज्ञ राष्ट्र ने उनकी स्मृति को जीवंत बना दिया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रो. मेनन गहन अनुसंधानकर्त्ता के साथ ही कुशल प्रशासक, महान संगठनकर्त्ता और सायंस के 'पालिसी मेकर' की भूमिका में भी अप्रतिम थे।

तरुण विज्ञानियों के प्रेरणापुंज

प्रो. मेनन के व्यक्तित्व की एक विशिष्टता यह भी थी कि वे तरुण विज्ञानियों की हौसला अफजाई गर्मजोशी से करते, उनकी प्रतिभा को निखारने में अपना महत्वपूर्ण अवदान देते थे। इस प्रकार उन्होंने अपने जीवन में नाना पदों पर रहते हुए जाने कितने तरुण विज्ञानियों का उत्साहवर्धन, मार्गदर्शन करके उन्हें शीर्षस्थ बना दिया जिन्होंने अपने-अपने संधान क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय यशस्विता अर्जित की और भारत का भाल ऊँचा किया। यहाँ पर हम मात्र डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की ही चर्चा कर सकेंगे। भारतीय राकेटों के जनक, 'मिसाइल मैन ऑफ इंडिया' की संज्ञा से अभिहित कलाम की आत्मस्वीकृति है कि प्रो. मेनन से उनकी भेंट न हुई होती और वे उनका मार्गदर्शन न करते तो वे कदाचित उस मुकाम तक न पहुँच सकते थे, जहाँ तक वे पहुँचे। डॉ. कलाम अपनी आत्मकथात्मक कृति 'विंग्स ऑफ फायर' में बड़ी विनम्रता से इसे स्वीकारते हैं और उनके प्रति कृतज्ञता भी ज्ञापित करते हैं -

उन दिनों वी.के.कृष्णमेनन रक्षामंत्री हुआ करते थे। वे हमारी इस परियोजना (हॉवरक्राफ्ट का निर्माण) की प्रगति के बारे में जानने के बड़े इच्छुक रहते। इस परियोजना को वह भारत के रक्षा उपकरणों के स्वदेशी विकास की शुरुआत के रूप में देखते थे। भगवान शिव के वाहन के प्रतीक रूप में इस हॉवरक्राफ्ट को 'नंदी' नाम दिया गया। इस मॉडल को संपूर्ण आकार एवं रंग-रूप दिया जाना हमारी उम्मीदों से परे था। हमारे पास इसका केवल ढांचा ही था। मैंने अपने साथियों से कहा, 'यह उड़ने वाली मशीन है, सनकियों के समूह द्वारा बनाई गई नहीं बल्कि इंजीनियरों की योग्यता से तैयार मॉडल। इसकी तरफ मत देखिए। यह देखने के लिए नहीं बना है बल्कि इसके साथ उड़िए।' रक्षामंत्री कृष्णमेनन ने अपने साथ आए अधिकारियों द्वारा व्यक्त की गई सुरक्षा संबंधी चिंताओं को नजरअंदाज करते हुए 'नंदी' में उड़ान भरी। वे बहुत खुश थे - 'तुमने दिखा दिया है कि हॉवरक्राफ्ट के विकास में जो बुनियादी समस्याएँ थीं, उन्हें दूर कर लिया गया है। इससे भी शक्तिशाली वाहन तैयार करो और मुझे दूसरी बार की सवारी के लिए बुलाओ।'

एक दिन डॉ. मेदीरत्ता ने मुझे बुलाया और हॉवरक्राफ्ट के बारे में पूछताछ की। जब उन्हें बताया गया कि यह उड़ान भरने के लिए पूरी तरह सक्षम है, तो उन्होंने मुझे अगले दिन एक विशिष्ट व्यक्ति के समक्ष इसका प्रदर्शन करने को कहा। अगले दिन डॉ. मेदीरत्ता उस विशिष्ट अतिथि को हमारा तैयार किया हुआ हॉवरक्राफ्ट दिखाने लाए। एक लंबा, खूबसूरत और दाढ़ीवाला व्यक्ति। उस शख्स ने मुझसे कई सवाल किए। मैं उनकी साफ सोच एवं विषयनिष्ठता से बहुत प्रभावित हुआ। 'क्या आप मुझे इसमें सवारी करा सकते हैं?' उन्होंने मुझसे पूछा। उनके इस अनुरोध से मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। आखिरकार किसी ने तो यहाँ आकर मेरे काम में दिलचस्पी दिखाई। इस हॉवरक्राफ्ट में हमने करीब दस मिनट तक हवा पर सवारी की, हालाँकि 'नंदी' जमीन से कुछ ही सेंटीमीटर ऊपर था। दरअसल यह उड़ान नहीं थी बल्कि हम हवा में तैर रहे थे। नंदी पर आरूढ़ इस अतिथि ने मुझसे मेरे बारे में कुछ सवाल पूछे तथा सवारी कराने के लिए धन्यवाद दिया और रवाना हो गए। खुद पहले अपना परिचय नहीं देने वाले ये विशिष्ट अतिथि कोई और नहीं बल्कि प्रो.एम.जी.के.मेनन थे। एक हफ्ते बाद मुझे इंडियन नेशनल कमेटी फॉर स्पेस रिसर्च (INCOSPAR) की ओर से साक्षात्कार के लिए बुलावा आया। यह साक्षात्कार रॉकेट इंजीनियर पद के लिए था। उस समय भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति के बारे में जितना मालूम था, वह यह कि भारत में अंतरिक्ष अनुसंधान के लिए टी.आई.एफ.आर. में विलक्षण लोगों की एक संस्था बनाई गई है।

मेरा साक्षात्कार डॉ. विक्रम साराभाई ने लिया। उनके साथ प्रो.एम.जी.के.मेनन और परमाणु ऊर्जा आयोग के तत्कालीन उपसचिव श्री सर्राफ भी थे। जैसे ही मैंने कमरे में प्रवेश किया, मुझे उत्साहवर्द्धक और दोस्तानापूर्ण माहौल महसूस हुआ। डॉ. साराभाई की जिंदादिली देखकर मैं दंग रह गया। उनमें कहीं कोई ऐसा अहंकार, अक्खड़पन या अतिरेक का भाव नहीं था, जैसा कि प्रायः साक्षात्कार लेने वाले नौजवान उम्मीदवार के सामने प्रदर्शित करते हैं।

मुझे दो दिन में वापस आने को कहा गया। पर फिर अगले दिन शाम को ही मुझे मेरे चयन के बारे में बता दिया गया। मुझे भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति में रॉकेट इंजीनियर के पद पर रख लिया गया। मेरे जैसे नौजवान के लिए अपना सपना पूरा करने का यह एक बड़ा मौका था।

उसके बाद शीघ्र ही मुझे रॉकेट प्रक्षेपण की तकनीकियों का प्रशिक्षण लेने के लिए अमेरिका में नेशनल एयरोनॉटिक्स एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन यानी 'नासा' में भेज दिया गया। यह प्रशिक्षण छह महीने का था।'

'नासा' से लौटने के बाद भारत में रॉकेट निर्माण संबंधी कार्य आरंभ हुए। कलाम के निर्देशन (परियोजना निदेशक) में भारत के पहले रॉकेट 'एस एल वी-3' का निर्माण हुआ। एस.एल.वी.-3 की सफल उड़ान (17 अप्रैल, 1983) के साथ भारत अंतरिक्ष क्लब का छठां सदस्य राष्ट्र बन गया और इसी के साथ भारत के प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम का जन्म हो गया। श्रीमती इंदिरा गांधी की निजी पहल पर 286 करोड़ रूपये के आरंभिक पूंजी निवेश के साथ कलाम के निर्देशन में आई.जी.एम.डी.पी. (Integrated Guided Missiles Development Programme) का गठन हुआ और कलाम तथा उनके सहयोगियों ने मात्र 6 वर्षों की लघु अवधि में भारत की 5 प्रक्षेपास्त्र प्रणालियों पृथ्वी, अग्नि, नाग, आकाश और त्रिशूल का सफलतापूर्वक विकास सम्पन्न करके दिखा दिया। इनमें से तीन मिसाइलों - पृथ्वी, अग्नि और आकाश की सैन्य तैनाती हो चुकी है और इस प्रकार कलाम भारतीय प्रक्षेपास्त्र विकास के सिरमौर बन गए और वे 'मिसाइल मैन' की संज्ञा से लोक में प्रख्यात हो गए।

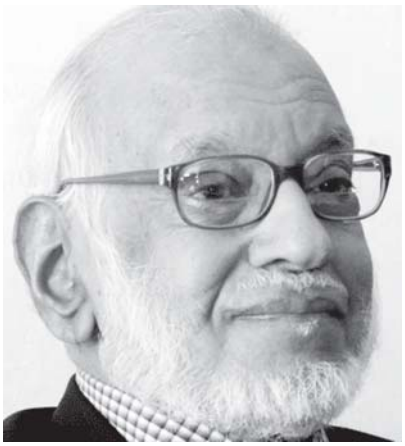

मेरा साक्षात्कार डॉ. विक्रम साराभाई ने लिया। उनके साथ प्रो.एम.जी.के. मेनन और परमाणु ऊर्जा आयोग के तत्कालीन उपसचित श्री सर्राफ भी थे। जैसे ही मैंने कमरे में प्रवेश किया, मुझे उत्साहवर्द्धक और दोस्तानापूर्ण माहौल महसूस हुआ। डॉ. साराभाई की जिंदादिली देखकर मैं दंग रह गया। उनमें कहीं कोई ऐसा अहंकार, अक्खड़पन या अतिरेक का भाव नहीं था, जैसा कि प्रायः साक्षात्कार लेने वाले नौजवान उम्मीदवार के सामने प्रदर्शित करते हैं।

अपनी आत्मकथा का समाहार करते हुए कलाम बड़ी शिद्दत से अपने गुरुओं और प्रेरणापुंजों को स्मरण करते हैं और उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन भी - 'यह कहानी शिव सुब्रह्मण्यम अय्यर और अय्यादुरै सोलोमन के शिष्य की कहानी है।' यह उस छात्र की कहानी है जिसे 'पनदलाई जैसे शिक्षकों ने पढ़ाया।' यह कहानी उस इंजीनियर की कहानी है जिसे एम.जी.के. मेनन ने उठाया और प्रो. साराभाई जैसी हस्ती ने तैयार किया और एक ऐसे कार्यदल नेता की कहानी जिसे बड़ी संख्या में विलक्षण व समर्पित वैज्ञानिकों का समर्थन मिलता रहा। यह छोटी सी कहानी मेरे जीवन के साथ समाप्त हो जायेगी। मैं नहीं चाहता कि मैं दूसरों के लिए कोई उदाहरण बनूं लेकिन मुझे विश्वास है कि कुछ लोग मेरी इस कहानी से प्रेरणा जरूर ले सकते हैं।'

विज्ञान संधान यात्रा

मेनन ने ब्रिस्टल में अपनी डाक्टोरेट संबंधी डिग्री के लिए जो मौलिक अनुसंधान किए थे, उसकी चर्चा हम इस आलेख के आरंभ में ही कर चुके हैं। जब उन्होंने टी.आई.एफ.आर. ज्वाइन किया तब उन्होंने उच्च उन्नतांशों पर गुब्बारों से कुछ प्रयोग आरंभ किए। कहना न होगा कि बैलूनों संबंधी प्रयोगों से ब्रह्मांडीय किरणों के आरंभिक अध्ययनों हेतु ऐसी सुविधा विकसित हुई जो आगे चलकर अपरिहार्य हो गई। निसंस्देह इन प्रयोगों में वी.के.बालसुब्रह्मण्यम, जी.एस.गोखले और टी.रेदकर जैसे विज्ञानी भी उनकी टोली के सदस्य थे। सैकड़ों मिलियन घन फीट आयतन वाले गुब्बारों का निर्माणय 1,10,000 फीट की ऊँचाई तक उनकी उड़ान और उनको धरती पर पुनः प्राप्त कर लेने संबंधी प्रयोग कुछ ही वर्षों में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए। बैलूनों के निर्माण के लिए पालीमर विकसित करने की सुविधा मुंबई में स्थापित की गई। निस्संदेह यह सुविधा टी.आई.एफ.आर.के वैज्ञानिकों ने जुटाई थी। बैलूनों के उत्पादन, उनकी उड़ान, ट्रैकिंग और रिकवरी जैसी सुविधाएं

अपनी आत्मकथा का समाहार करते हुए कलाम बड़ी शिद्दत से अपने गुरुओं और प्रेरणापुंजों को स्मरण करते हैं और उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन भी – 'यह कहानी शिव सुब्रह्मण्यम अय्यर और अय्यादुरै सोलोमन के शिष्य की कहानी है।' यह उस छात्रों की कहानी है जिसे 'पनदलाई जैसे शिक्षकों ने पढ़ाया।' यह कहानी उस इंजीनियर की कहानी है जिसे एम. जी.के. मेनन ने उठाया और प्रो. साराभाई जैसी हस्ती ने तैयार किया और एक ऐसे कार्यदल नेता की कहानी जिसे बड़ी संख्या में विलक्षण व समर्पित वैज्ञानिकों का समर्थन मिलता रहा। यह छोटी सी कहानी मेरे जीवन के साथ समाप्त हो जायेगी। मैं नहीं चाहता कि मैं दूसरों के लिए कोई उदाहरण बनूं लेकिन मुझे विश्वास है कि कुछ लोग मेरी इस कहानी से प्रेरणा जरूर ले सकते हैं।'

विगत शती के साठादि में सफलतापूर्वक विकसित की गईं। ऐसा प्रयोग विश्व में पहली बार सम्पन्न हुआ था। आगे चलकर सोवियत संघ और जापान में भी इनका अनुसरण किया गया और ऐसी सुविधाएं विकसित की गईं। इनसे ब्रह्मांडीय विकिरणों के अध्ययन में अभूतपूर्व सफलता मिली।

आगे चलकर मेनन ने कोलार की स्वर्ण खदानों में धरती की सतह से दो मील की गहराई में न्यूट्रिनों पर गहन अनुसंधान किए। इस कार्य में डॉ. नरसिम्हम, रामन् मूर्ति, श्रीकांतन और जापान के प्रो.एस. माइयाके उनके सहधर्मी थे। तत्पश्चात् टी.आई.एफ.आर., ओसाका सिटी विश्वविद्यालय और डरहम विश्वविद्यालय, ब्रिटेन के आपसी सहयोग से इस संधान को त्वरा मिली। फलस्वरूप प्राकृतिक न्यूट्रिनों की अंतःक्रिया का सर्वेक्षण और विश्लेषण करना संभव हो सका। मूलभूत कणों के गुणधर्मों के अध्ययन और उनकी व्याख्या के लिए कण भौतिकी के क्षेत्र में यह प्रगत संधान कार्य था जिसकी महत्ता सार्वकालिक है।

अलंकरण एवं सम्मान

विज्ञान जगत में प्रो. मेनन के अप्रतिम अवदानों के दृष्टिगत भारत के राष्ट्रपति ने उन्हें 'पद्मश्री' (1961) और 'पद्मभूषण' (1968) जैसे नागरिक अलंकरणों से समादृत किया। सी.एस.आई.आर. का शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कार (1960); रॉयल एशियाटिक सोसायटी का खेतान मेडल (1978); केरल राज्य समिति विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी पुरस्कार (1979); पं. जवाहर लाल नेहरू पुरस्कार (1983); गुरु प्रसाद चटर्जी पुरस्कार (1985); सी.वी.रामन् मेडल (1986); ओम प्रकाश भसीन पुरस्कार (1985); जे. सी. बसु स्वर्ण पदक, सर आशुतोष मुखर्जी स्वर्ण पदक (1988); विश्व स्वास्थ्य संगठन का 'हेल्थ फॉर ऑल' मेडल (1988); शिरोमणि पुरस्कार (1988) आदि उनकी लब्धियों के प्रति सम्मान के प्रतीक हैं।

भारत की तीनों विज्ञान आकादमियों - नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज, इंडिया, इलाहाबाद इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी, नई दिल्ली तथा इंडियन एकेडमी ऑफ साइंसेज, बंगलौर के अध्यक्ष रहे। इतना ही नहीं, उन्हें लंदन की मशहूर वैज्ञानिक संस्था 'रॉयल सोसायटी' ने भी अपना फेलो (एफ.आर.एस.) चुनकर उन्हें समादृत किया। यह एक विरल सम्मान है। उन्हें देश के कई विश्वविद्यालयों-जोधपुर, दिल्ली, सरदार पटेल (वल्लभ विद्यानगर), इलाहाबाद, रुड़की, बनारस हिंदू, जादवपुर (कोलकाता), श्री वेंकटेश्वर (तिरुपति), आंध्र, उत्कल, अलीगढ़ मुस्लिम, आई.आई.टी.मद्रास, आई.आई.टी. खड़गपुर ने डी. एस.सी. की मानद उपाधियां प्रदान की। स्टीवेन्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, अमेरिका ने उन्हें इंजीनियरिंग में मानद डाक्टोरेट की उपाधि से नवाजा।

इधर कुछ वर्षों से डॉ. मेनन अस्वस्थ थे। अंततः 22 नवंबर, 2016 को नई दिल्ली में प्रो.एम.जी. के. मेनन का त्रासद निधन हो गया जो समस्त विज्ञान समुदाय के लिए एक अपूरणीय क्षति है। यद्यपि अब प्रो. मेनन हमारे बीच तो नहीं हैं लेकिन उनकी यशःकाया अब भी प्रदीप्त है। हम जब भी कभी आधुनिक भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के परिप्रेक्ष्य में प्रगतसंधानों की चर्चा करेंगे या कि विज्ञानेतिहास अंकित किया जायेगा तो वह चर्चा प्रो. मेनन के नामोल्लेख के बिना अधूरी रहेगी।

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, विरल एवं वरेण्य विज्ञानी प्रो. मेनन को हमारी विनम्र श्रद्धांजलियाँ। अस्तु!

sdprasad24oct@yahoo.com

❑❑❑

पर्यावरणविद् अनुपम मिश्र के गत दिनों असामयिक निधन से देश को अपूरित क्षति हुई है। वे एक ऐसे संवेदनशील मनुष्य थे जो प्रकृति और पृथ्वी के संरक्षण के प्रति समाज में जागरुकता के लिए प्रतिबद्ध रहे। उनका जीवन बहुत साधारण तथा उनके कार्य बहुत असाधारण थे। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' तथा 'आईसेक्ट परिवार' उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है। पाठकों के लिए यहाँ उनकी प्रसिद्ध कृति 'आज भी खरे हैं तालाब' के अंश की अविकल प्रस्तुति दी जा रही है।

आज भी खरे हैं तालाब

अनुपम मिश्र

बुरा समय आ गया था।

भोपा होते तो ज़रूर बताते कि तालाबों के लिए बुरा समय आ गया था। जो सरस परंपराएं, मान्यताएँ तालाब बनाती थीं, वे ही सूखने लगी थीं।

दूरी एक छोटा सा शब्द है। लेकिन राज और समाज के बीच में इस शब्द के आने से समाज का कष्ट कितना बढ़ जाता है, इसका कोई हिसाब नहीं। फिर जब यह दूरी एक तालाब की नहीं, सात समुंदर की हो जाए तो बखान के लिए क्या रह जाता है?

अंग्रेज़ सात समुंदर पार से आए थे और अपने समाज के अनुभव लेकर आए थे। वहाँ वर्गों पर टिका समाज था, जिसमें स्वामी और दास के संबंध थे। वहाँ राज्य ही फैसला करता था कि समाज का हित किस में है। यहाँ जाति का समाज था और राजा ज़रूर थे पर राजा और प्रजा के संबंध अंग्रेज़ों के अपने अनुभवों से बिलकुल भिन्न थे। यहाँ समाज अपना हित स्वयं तय करता था और उसे अपनी शक्ति से, अपने संयोजन से पूरा करता था। राज उसमें सहायक होता था।

पानी का प्रबंध, उसकी चिंता हमारे समाज के कर्तव्य-बोध के विशाल सागर की एक बूंद थी। सागर और बूंद एक दूसरे से जुड़े थे। बूंदें अलग हो जाएं तो न सागर रहे, न बूंद बचे। सात समुंदर पार से आए अंग्रेज़ों को समाज के कर्तव्य बोध का न तो विशाल सागर दिख पाया, न उसकी बूंदें। उन्होंने अपने यहाँ के अनुभव और प्रशिक्षण के आधार पर यहाँ के राज में दस्तावेज ज़रूर खोजने की कोशिश की, लेकिन वैसे रिकार्ड राज में रखे नहीं जाते थे। इसलिए उन्होंने मान लिया कि यहाँ सारी व्यवस्था उन्हीं को करनी है। यहाँ तो कुछ है ही नहीं!

देश के अनेक भागों में घूम फिर कर अंग्रेजों ने कुछ या काफी जानकारियाँ ज़रूर एकत्र कीं, लेकिन यह सारा अभ्यास कुतूहल से ज्यादा नहीं था। उसमें कर्तव्य के सागर और उसकी बूंदों को समझने की दृष्टि नहीं थी। इसलिए विपुल मात्रा में जानकारियाँ एकत्र करने के बाद भी जो नीतियाँ बनीं, उन्होंने तो इस सागर ओर बूंद को अलग-अलग ही किया।

उत्कर्ष का दौर भले ही बीत गया था, पर अंग्रेजों के बाद भी पतन का दौर प्रारंभ नहीं हुआ था। उन्नीसवीं सदी के अंत और तो

और बीसवीं सदी के प्रारंभ तक अंग्रेज़ यहाँ घूमते-फिरते जो कुछ देख रह थे, लिख रहे थे, जो गजेटियर बना रहे थे, उनमें कई जगहों पर छोटे ही नहीं, बड़े-बड़े तालाबों पर चल रहे काम का उल्लेख मिलता है।

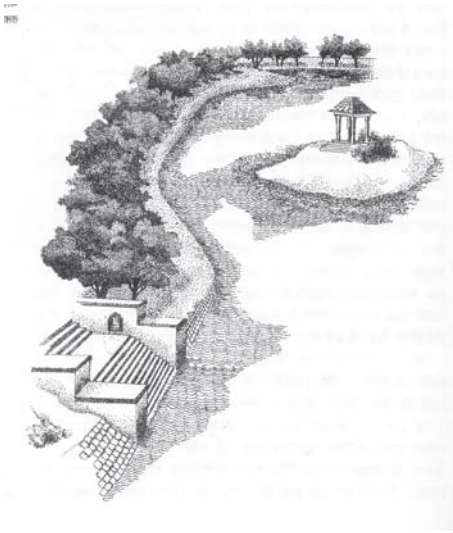

मैसूर के 39,000 तालाबों की दुर्दशा का किस्सा बहुत लंबा है। पी.डब्ल्यू. डी. से काम नहीं चला तो फिर पहली बार सिंचाई विभाग बना। उसे तालाब सौंपे गए। वह भी कुछ नहीं कर पाया तो वापस पी.डब्ल्यू.डी. को। अंग्रेज़ विभागों की अदला–बदली के बीच तालाबों से मिलने वाला राज्स्व बढ़ाते गए और रख–रखाव की राशि छांटते–काटते गये। अंग्रेज़ इस काम के लिए चंदा तक मांगने लगे जो फिर जबरन वसूली तक चला गया। इधर दिल्ली तालाबों की दुर्दशा की नई राजधानी बन चली थी। अंग्रेज़ों के आने से पहले तक यहाँ 350 तालाब थे। इन्हें भी राजस्व के लाभ के पलड़े से बाहर फेंक दिए गए।

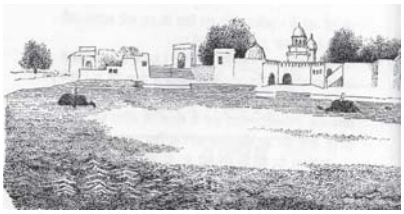

मध्यप्रदेश के दुर्ग और राजनांदगांव जैसे क्षेत्रों में सन 1907 तक भी ''बहुत से बड़े तालाब बन रहे थे।'' इनमें तांदुला नामक तालाब ''ग्यारह वर्ष तक लगातार चले काम के बाद बन कर बस अभी तैयार ही हुआ था। इससे सिंचाई के लिए निकली नहरों-नालियों की लंबाई 513 मील थी।''

जो नायक समाज को टिकाए रखने के लिए यह सब काम करते थे, उनमें से कुछ के मन में समाज को डिगाने-हिलाने वाली नई व्यवस्था भला कैसे समा पाती? उनकी तरफ से अंग्रेजों को चुनौतियाँ भी मिलीं। सांसी, भील जैसी स्वाभिमानी जातियों को इसी टकराव के कारण अंग्रेजी राज ने ठग और अपराधी तक कहा। अब जब सब कुछ अंग्रेज़ों को ही करना था तो उनसे पहले के पूरे ढाँचे को टूटना ही था। उस ढाँचे को दुतकारना, उसकी उपेक्षा करना कोई बहुत सोचा-विचारा गया, कुटिल षड्यंत्र नहीं था। वह तो इस नई दृष्टि का सहज परिणाम था और दुर्भाग्य से यह नई दृष्टि हमारे समाज के उन लोगों तक को भा गई थी, जो पूरे मन से अंग्रेज़ों का विरोध कर रहे थे और देश को आज़ाद करने के लिए लड़ रहे थे।

पिछले दौर के अभ्यस्त हाथ अब अकुशल कारीगरों में बदल दिए गए थे। ऐसे बहुत से लोग जो गुनीजनखाना यानी गुणी माने गए जनों की सूची में थे, वे अब अनपढ़, असभ्य, अप्रशिक्षित माने जाने लगे। उस नए राज और उसके प्रकाश के कारण चमकी नई सामाजिक संस्थाएं, नए आंदोलन भी अपने ही नायकों के शिक्षण-प्रशिक्षण में अंग्रेज़ों से भी आगे बढ़ गए थे। आज़ादी के बाद की सरकारों, सामाजिक संस्थाओं तथा ज़्यादातर आंदोलनों में भी यही लज्जाजनक प्रवृत्ति जारी रही थी।

उस गुणी समाज के हाथ से पानी का प्रबंध किस तहर छीना गया इसकी एक झलक तब के मैसूर राज में देखने को मिलती है।

सन 1800 में मैसूर राज दीवान पूर्णया देखते थे। तब राज्य भर में 39,000 तालाब थे। कहा जाता था कि वहाँ किसी पहाड़ी की चोटी पर एक बूंद गिरे, आधी इस तरफ और आधी उस तरफ बहे तो दोनों तरफ इसे सहेज कर रखने वाले तालाब वहाँ मौजूद थे। समाज के अलावा राज भी इन उम्दा तालाबों की देख-रेख के लिए हर साल कुछ लाख रुपए लगाता था।

राज बदला। अंग्रेज आए। सबसे पहले उन्होंने इस 'फिजूल खर्ची' को रोका और सन 1831 में राज की ओर से तालाबों के लिए दी जाने वाली राशि को काट कर एकदम आधा कर दिया। अगले 32 बरस तक लोगों के थे, सो राज से मिलने वाली मदद के कम हो जाने, कहीं-कहीं बंद हो जाने क बाद भी समाज तालाबों को संभाले रहा। बरसों पुरानी स्मृति ऐसे ही नहीं मिट जाती। लेकिन फिर 32 बरस बाद यानी सन 1863 में वहाँ पहली बार पी.डब्ल्यू.डी. बना और सारे तालाब लोगों से छीन कर उसे सौंप दिए गए।

प्रतिष्ठा पहले ही हर ली थी। फिर धन, साधन छीने और अब स्वामित्व भी ले लिया गया था। सम्मान, सुविधा और अधिकारों के बिना समाज लाचार होने लगा था। ऐसे में उससे सिर्फ अपने कर्तव्य निभाने की उम्मीद कैसे की जाती?

मैसूर के 39,000 तालाबों की दुर्दशा का किस्सा बहुत लंबा है। पी.डब्ल्यू.डी. से काम नहीं चला तो फिर पहली बार सिंचाई विभाग बना। उसे तालाब सौंपे गए। वह भी कुछ नहीं कर पाया तो वापस पी.डब्ल्यू.डी. को। अंग्रेज़ विभागों की अदला-बदली के बीच तालाबों से मिलने वाला राज्स्व बढ़ाते गए और रख-रखा की राशि छाँटते-काटते गये।

अंग्रेज़ इस काम के लिए चंदा तक मांगने लगे जो फिर जबरन वसूली तक चला गया। इधर दिल्ली तालाबों की दुर्दशा की नई राजधानी बन चली थी। अंग्रेज़ों के आने से पहले तक यहाँ 350 तालाब थे। इन्हें भी राजस्व के लाभ के पलड़े से बाहर फेंक दिए गए।

उसी दौर में दिल्ली में नल लगने लगे थे। इसके विरोध की एक हल्की-सी सुरीली आवाज़ सन 1900 के आसपास विवाहों के अवसर पर गाई जाने वाली 'गारियों', विवाह-गीतों में दिखी थी। बारात जब पंगत में बैठती तो स्त्रियाँ 'फिरंगी नल मत लगवाय दियो' गीत गातीं। लेकिन नल लगते गए और जगह-जगह बने तालाब, कुएँ और बावड़ियों के बदले अंग्रेज़ द्वारा नियंत्रित 'वाटर वर्क्स' से पानी आने लगा। पहले सभी बड़े शहरों में और फिर धीरे-धीरे छोटे शहरों में भी यही स्वप्न साकार किय जाने लगा। पर केवल पाईप बिछाने और नल की टोंटी लगा देने से पानी नहीं आता। यह बात उस समय नहीं लेकिन आजादी के कुछ समय बाद धीरे-धीरे समझ में आने लगी थी। सन 1970 के बाद तो यह डरावने सपने में बदलने लगी थी तब तक कई शहरों के तालाब उपेक्षा की गाद से पट चुके थे और उन पर नए मोहल्ले, बाजार, स्टेडियम खड़े हो चुके थे।

पर पानी अपना रास्ता नहीं भूलता। तालाब हथिया कर बनाए गए नए मोहल्लों में वर्षा के दिनों में पानी भर जाता है और फिर वर्षा बीती नहीं कि इन शहरों में जल संकट के बादल छाने लगते हैं।

जिन शहरों के पास फिलहाल थोड़ा पैसा है, थोड़ी ताकत है, वे किसी और के पानी को छीन कर अपने नलों को किसी तरह चला रह हैं पर बाकी की हालत तो हर साल बिगड़ती ही जा रही है। कई शहरों के कलेक्टर फरवरी माह में आसपास के गाँवों के बड़े तालाबों का पानी सिंचाई क कामों से रोक कर शहरों के लिए सुरक्षित कर लेते हैं।

शहरों को पानी चाहिए पर पानी दे सकने वाले तालाब नहीं। तब पानी ट्यूबवैल से ही मिल सकता है पर इसके लिए बिजली, डीज़ल के साथ-साथ उसी शहर के नीचे पानी चाहिए। मद्रास जैसे कई शहरों का दुखद अनुभव यही बताता है कि लगातार गिरता जल-स्तर सिर्फ पैसे और सत्ता के बल पर थामा नहीं जा सकता। कुछ शहरों ने दूर बहने वाली किसी नदी से पानी उठा कर लाने के बेहद खर्चीले और अव्यावहारिक तरीके अपनाए हैं। लेकिन ऐसी नगर पालिकाओं पर करोड़ों रुपये के बिजली के बिल भी चढ़ चुके हैं।

इंदौर का ऐसा ही उदाहरण आंख खोल सकता है। यहाँ दूर बह रही नर्मदा का पानी लाया गया था। योजना का पहला चरण छोटा पड़ा, तो एक स्वर से दूसरे चरण की माँग भी उठी और अब सन 1993 में तीसरे चरण के लिए भी आंदोलन चल रहा है। इसमें कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, साम्यवादी दलों के अलावा शहर के पहलवान अनोखीलाल भी एक पैर पर एक ही जगह 34 दिन तक खड़े रह कर 'सत्याग्रह' कर चुके हैं। इस इंदौर में अभी कुछ ही पहले तक बिलावली जैसा तालाब था, जिसमें फ्लाइंग क्लब के जहाज़ के गिर जाने पर नौसेना के गोताखोर उतारे गए थे पर वे डूबे जहाज़ को आसानी से खोज नहीं पाए थे। आज बिलावली एक सूखा मैदान है और इसमें फ्लाइंग क्लब के जहाज़ उड़ाए जा सकते हैं।

इंदौर के पड़ोस में बसे देवास शहर का किस्सा तो और भी विचित्र है। पिछले 30 वर्ष में यहाँ के सभी छोटे-बड़े तालाब भर दिए गए और उन पर मकान और कारखाने खुल गए। लेकिन फिर 'पता' चला कि इन्हें पानी देने का कोई स्रोत ही नहीं बचा है। शहर के खाली होने तक की खबरें छपने लगी थीं। शहर के लिए पानी जुटाना था पर पानी कहां से लाएं? देवास के तालाबों, कुओं के बदले रेलवे स्टेशन पर दस दिन तक दिन-रात काम चलता रहा।

इंदौर के पड़ोस में बसे देवास शहर का किस्सा तो और भी विचित्र है। पिछले 30 वर्ष में यहाँ के सभी छोटे-बड़े तालाब भर दिए गए और उन पर मकान और कारखाने खुल गए। लेकिन फिर 'पता' चला कि इन्हें पानी देने का कोई स्रोत ही नहीं बचा है। शहर के खाली होने तक की खबरें छपने लगी थीं। शहर के लिए पानी जुटाना था पर पानी कहाँ से लाएँ ? देवास के तालाबों, कुओं के बदले रेलवे स्टेशन पर दस दिन तक दिन-रात काम चलता रहा।

25 अप्रेल, 1990 को इंदौर से 50 टैंकर पानी लेकर रेलगाड़ी देवास आई। स्थानी

शासन मंत्री की उपस्थिति में ढोल नगाड़े बजा कर पानी की रेल का स्वागत हुआ। मंत्रीजी ने इंदौर स्टेशन आई 'नर्मदा' का पानी पीकर इस योजना का उद्घाटन किया। संकट के समय इससे पहले भी गुजरात और तमिलनाडु के कुछ शहरों में रेल से पानी पहुँचाया गया है पर देवास में तो अब हर सुबह पानी की रेल आती है, टैंकरों का पानी पंपों के सहारे टंकियों में चढ़ता है और तब शहर में बंटता है।

रेल का भाड़ा हर रोज़ चालीस हज़ार रुपया है। बिजली से पानी ऊपर चढ़ाने का खर्च अलग और इंदौर से मिलने वाले पानी का दाम भी लग जाए तो पूरी योजना दूध के भाव पड़ेगी। लेकिन अभी मध्यप्रदेश शासन केंद्र शासन से रेल भाड़ा माफ़ करवाता जा रहा है। दिल्ली के लिए दूर गंगा का पानी उठा कर लाने वाला केंद्र शासन अभी मध्यप्रदेश के प्रति उदारता बरत रहा है। मनमोहन सिंह की नई 'उदारवादी' नीति रेल और बिजली के दाम चुकाने को कह बैठी तो देवास को नरक सा बनने में कितनी देरी लगेगी?

पानी के मामले में निपट बेवकूफी के उदाहरणों की कोई कमी नहीं है। मध्यप्रदेश के ही सागर शहर को देखें। कोई 600 बरस पहले लाखा बंजारे द्वारा बनाए गए सागर नामक एक विशाल तालाब के किनारे बसे इस शहर का नाम सागर ही हो गया था। आज यहाँ नए समाज की चार बड़ी प्रतिष्ठित संस्थाएँ हैं। पुलिस प्रशिक्षण केंद्र है, सेना के महार रेजिमेंट का मुख्यालय है, नगर पालिका है और सर हरिसिंह गौर के नाम पर बना विश्वविद्यालय है। एक बंजारा यहाँ आया और विशाल सागर बना कर चला गया लेकिन नए समाज की चार साधन संपन्न संस्थाएं इस सागर की देखभाल तक नहीं कर पाई! आज सागर तालाब पर ग्यारह शोध प्रबंध पूरे हो चुके हैं, डिग्रियाँ बंट चुकी हैं पर एक अनपढ़ माने गए बंजारे के हाथों बने सागर को पढ़ा-लिखा माना गया समाज बचा तक नहीं पा रहा है।

उपेक्षा की इस आंधी में कई तालाब आज भी भर रहे हैं और वरुण देता का प्रसाद सुपात्रों के साथ-साथ कुपात्रों में भी बांट रहे हैं। उनकी मज़बूत बनक इसका एक कारण है पर एकमात्र कारण नहीं। तब तो मज़बूत पत्थर के बने पुराने किले खंडहरों में नहीं बदलते। कई तरफ से टूट चुके समाज में तालाबों की स्मृति अभी भी शेष है। स्मृति की यह मज़बूती पत्थर की मज़बूती से ज़्यादा मज़बूत है।

छत्तीगढ़ के गांवों में आज भी छेर-छेरा के गीत गाए जाते हैं और उससे मिल अनाज से अपने तालाबों की टूट-फूट ठीक की जाती है। आज भी बुंदेलखंड में कजलियों के गीत में उसके आठों अंग डूब सकें- ऐसी कामना की जाती है। हरियाणा के नारनौल में जात उतारने के बाद माता-पिता तालाब की मिट्टी काटते हैं और पाल पर चढ़ाते हैं। न जाने कितने शहर, कितने सारे गांव इन्हीं तालाबों के कारण टिके हुए हैं। बहुत-सी नगर पालिकाएं आज भी इन्हीं तालाबों के कारण पल रही हैं और सिंचाई विभाग इन्हीं के दम पर खेतों को पानी दे पा रहे हैं। बीजा की डाह जैसे गांवों में आज भी सागरों के वही नायक नए तालाब भी खोद रहे हैं। उधर रोज़ सुबह-शाम घड़सीसर में आज भी सूरज मन भर सोना उंडेलता है।

कुछ कानों में आज भी यह स्वर गूँजता है :
''अच्छे-अच्छे काम करते जाना।''

'आज भी खरे हैं तालाब' से साभार

❑❑❑

महासागर बोलते हैं
लेखक : बजरंग लाल जेठू
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 250 रुपये

यह पुस्तक सागर की जुबानी है जो अपने प्रवाह, धारा, चक्र, मानसून, सुनामी, अलनिनो, जीवजगत-वनस्पति व जन्तु, समुद्री घास, मैन्ग्रोव, शैवाल, नमक, पेट्रोलियम, मूंगा आदि के बारे स्वयं बोलता है। बोलते-बोलते सागर उदास हो जाता है जब हम उसमें हर तरह का कचरा और गंदगी दफनाते हैं।

बजरंग लाल जेठू का जन्म 10 अगस्त 1958 को हुआ। आपने एम.एस-सी एमएड तक शिक्षा प्राप्त की। आपकी चर्चित कृतियों में मरू-प्रदेश की वनस्पतियाँ, हमारे वृक्ष, जल एवं वायु के पर्यावरणीय संप्रत्यय, ठोस अपशिष्ट के पर्यावरणीय पक्ष, हमारी जन परंपराएं, हमारी जल संस्कृति के विलुप्त होते अध्याय, पर्यावरण त्रयी, हमारी जल परम्पराएं, प्रारंभिक जैव-प्रौद्योगिकी, माध्यमिक जैव-प्रौद्योगिकी, परिचयात्मक जैव प्रौद्योगिकी, विद्युत उत्पादन की पर्यावरण-मित्र तकनीकें, आपदा विज्ञान एवं आपदा-प्रबंधन, राजपूत की बेटी, थारी म्यारी एवं कहवतां किकर चाली (राजस्थान) शामिल हैं। मेदनी पुरस्कार, मेघनाथ साहा पुरस्कार, जगदीश चंद्र बोस हिन्दी लेखन पुरस्कार, हिन्दी सेवी पुरस्कार आदि से नवाजे गये।

आयडिया

से बदलती और बनती हमारी दुनिया

डॉ. कपूरमल जैन

किसी भी समस्या के समाधान के लिए कदम तब उठते हैं जब यह 'मेंटल नेटवर्क' में आती है। समस्या के 'मेंटल नेटवर्क' में आने पर समाधान हेतु मन–मस्तिष्क सक्रिय होने लगता है। आयडिया तेजी से आते हैं और कई अवसरों पर हमें एक नहीं अनेकों आयडिया आते हैं। इनमें कुछ बेतुके और उलूल–जुलूल किस्म के भी हो सकते हैं। लेकिन हम जानते हैं कि गरम होते हुए जल में जल के अणु बेतरतीब गति से घूमते रहते के बावजूद कुछ देर बाद 'विक्षुब्ध' और 'अक्रमबद्ध' जल के अणुओं की अवस्था में 'क्रमबद्धता' जन्म लेने लगती है और 'संवाहन धाराएं' बनने लगती है। अतः उलूल–जुलूल आयडिया को आने से रोकना नहीं चाहिए।

सोचने के लिए मजबूर कर देने वाली कई समस्याएँ हमें अपने दैनिक क्रिया-कलापों के दौरान मिलती हैं। उदाहरण के लिए पशुओं द्वारा सड़क पर खाद्य पदार्थो से चिपकी अपच्य जिलेटिन की थैलियों का खाते हुए मिलना, वाहनों की सीमा से अधिक बढ़ती गति के कारण सड़क दुर्घटनाओं की वृद्धि का होना, कोहरे के कारण आवागमन का बाधित होना और दुर्घटनाओं का होना, बुजुर्ग लोगों में मेमोरी-लॉस के कारण उनका रास्ता भटक जाना, वर्षा के दिनों में कीटों के घर में प्रवेश के कारण बीमारियों का बढ़ना, रोगियों को लगाई जाने वाली ग्लुकोज के बॉटल के खाली होने की सूचना समय पर न मिलने से रोगी की हालत का बिगड़ना, मरीजों की पैथालॉजिकल जाँच में विलम्ब का होना, गरमी के दिनों में किचन में पंखे के चलने पर गैस चूल्हे का बार-बार बुझना, खेतों में सोयाबीन या गेहूँ की कटाई के बाद डंठलों के जलने से हवा का प्रदूषित होना आदि अनेक ऐसे अनुभव-जन्य स्रोत हो सकते हैं जो हमें विभिन्न समस्याओं से अवगत कराते हैं। लेकिन इनके अलावा भी समस्याओं के अन्य कई स्रोत हो सकते हैं। ये समस्याएं हमें पढ़ते, पढ़ाते, शोध करते समय भी मिल सकती हैं। ये हमें खेतों, कारखानों या कार्यालयों में काम करते हुए भी मिल सकती हैं। इस तरह समस्याएँ हमें कभी भी, कहीं भी और किसी भी रूप में मिल सकती हैं। इनमें से कई समस्याएँ हमसे और हमारे आस-पास बस रहे लोगों, जैसे किसान, दुकानदार, बीमार, डाक्टर, कुम्हार, माली, स्वर्णकार, लोहार, पिंजारे, मिस्त्री, सुतार, तकनीशियन, शिक्षक, विद्यार्थी, बच्चों, युवा, वृद्धों आदि से भी जुड़ी हो सकती हैं। समस्याएं घर या बड़े उद्योग जगत से संबंधित भी हो सकती है। ये लघु और मझोले उद्योगों जैसे रेशम, हाथ करघा, मोमबत्ती, अगरबत्ती, पापड़ आदि से जुड़ी उत्पादन केंद्रों की भी हो सकती हैं। इनका संबंध किसी भी क्षेत्र से हो सकता है। सच में तो समस्याएँ हमारे आस-पास खदबदाती ही रहती हैं। ये शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक या तकनीकी किस्म की हो सकती हैं। बात सिर्फ महसूस करने और 'मेंटल नेटवर्क' में आने की होती है।

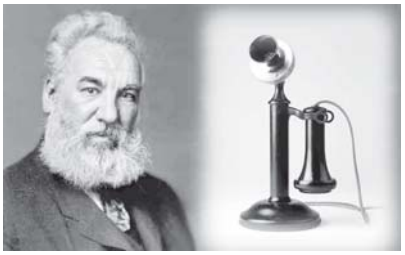

अलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल

एक कम्पनी तेल के लिए कुँए की खुदाई कर रही थी लेकिन कुछ गहराई के बाद प्रयुक्त किये जा रहे पारम्परिक और प्रचलित 'लुब्रिकेंट' का क्षारीय जल से मिल कर चट्टान जैसा बन जाने के कारण ड्रिलिंग नहीं हो पा रही थी। कम्पनी ने पंजाब विश्वविद्यालय में कार्यरत प्राफेसर शांतिस्वरूप भटनागर से सम्पर्क कर मदद चाही। भटनागर ने समस्या पर विचार किया तो उन्हें श्यानता से जुड़ी समस्या नजर आई। समाधान के रूप में उनके मन में एक अपारंपरिक आयडिया आया। उन्होंने कम्पनी को लुब्रिकेंट में 'इंडियन गम' मिलाने का सुझाव दिया। जब सुझाव के अनुसार काम किया गया तो इसने श्यानता को कम कर दिया और आयडिया काम कर गया।

समस्याओं का मेंटल नेटवर्क में आना

किसी भी समस्या के समाधान के लिए कदम तब उठते हैं जब यह 'मेंटल नेटवर्क' में आती है। समस्या के 'मेंटल नेटवर्क' में आने पर समाधान हेतु मन-मस्तिष्क सक्रिय होने लगता है। आयडिया तेजी से आते हैं और कई अवसरों पर हमें एक नहीं अनेकों आयडिया आते हैं। इनमें कुछ बेतुके और उलूल-जुलूल किस्म के भी हो सकते हैं। लेकिन हम जानते हैं कि गरम होते हुए जल में जल के अणु बेतरतीब गति से घूमते रहने के बावजूद कुछ देर बाद 'विक्षुब्ध' और 'अक्रमबद्ध' जल के अणुओं की अवस्था में 'क्रमबद्धता' जन्म लेने लगती है और 'संवाहन धाराएं' बनने लगती है। अतः उलूल-जुलूल आयडिया को आने से रोकना नहीं चाहिए।

सामने आते हैं कई बार चकित कर देने वाले मार्गदर्शी निष्कर्ष

हमें सिखाने के लिए 'प्रकृति' के पास बहुत कुछ होता है। प्रकृति नये-नये आयडिया की उत्पत्ति का केंद्र है। हम जितनी बार इसे देखते हैं, हर बार यह हमें अपने क्रियाकलापों से चकित करती रहती है। यही कारण है कि हमें प्रकृति की गोद में कई आयडिया जन्म लेते हुए दिखाई देते हैं। अतः किसी समस्या के समाधान खोजते समय प्रकृति का सामीप्य और अवलोकन बहुत लाभदायक सिद्ध होता है। सामान्यतः हमें आयडिया तब आते हैं जब हम किसी न किसी समस्या से जूझ रहे होते हैं। अगर हमें गरमी लग रही है और 'अखबार' पास में रखा है तो 'अखबार' को पंखे के रूप में इस्तेमाल करने का आयडिया हमारे मन में आ सकता है। लेकिन, यही 'अखबार' कड़ाके की सर्दी में ओड़ने के रूप में इस्तेमाल किये जाने का आयडिया भी दे सकता है। इस तरह उपयोगिता की दृष्टि से एक ही वस्तु के कई आयाम हो सकते हैं। और, सोचने पर जरूरत या समस्या हमें उस छिपे हुए आयाम को दिखा देती है।

जब भी हम किसी कार्य को पूरे मनोयोग और ध्यान से कर रहे होते हैं और उसे बेहतर बनाना चाहते हों तब हमारे मन में अचानक कोई आयडिया पैदा हो सकता है। जब शांतिस्वरूप भटनागर विद्यार्थी थे तब अल्कोहल बनाने के लिए प्रयुक्त 'फरमेंटेशन' की प्रक्रिया को पढ़ते समय उनके मन में अनार के रस के फरमेंटेशन का आयडिया आया जिसे उन्होंने एक लेख के माध्यम से अभिव्यक्त किया। अपनी बाल्यावस्था में आयजक न्यूटन (Isaac Newton) आकाश में तारे टंगे रहने से चकित थे। वे कक्षा में इससे जुड़े 'बेतुके' सवालों को करते रहते थे। शिक्षक समुचित जवाब नहीं दे पाते और कक्षा में बैठे विद्यार्थी हँसते लेकिन वे हतोत्साहित नहीं हुए और अंततः इससे जन्में आयडिया के बल पर 'गुरूत्वाकर्षण के नियम' को खोजने में वे सफल हुए।

अलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल (Alexander Graham Bell) को दुनिया 'टेलीफोन' के आविष्कारक के रूप में जानती है। एक बार उनके पिता ने उन्हें गेहूं के दानों से भूसी साफ करने को कहा। उन्होंने काम की प्रक्रिया को जाना और तीन दिनों तक परंपरागत तरीके से करते रहे। इस बीच वे सोचते रहे और फिर उनके मन में एक आयडिया ने आकार लिया जिससे एक विशेष प्रकार के ब्रश का आविष्कार हो गया जो बेहतर और तेज़ गति से सफाई कर सकता था। पिता ने शाबासी दी। और, शाबासी ने उन्हें इसमें सुधार के लिये प्रेरित किया। उनकी कल्पनाएँ उड़नें भरने लगीं। सोचने लगे तो उन्हें काम को तेज गति से निपटाने के लिए आयडिया मिल गया। अब उन्होंने लकड़ी के फ्रेम में 6 ब्रश कस कर एक मशीन बना दी।

एक बार एक कम्पनी तेल के लिए कुँए की खुदाई कर रही थी लेकिन कुछ गहराई के बाद प्रयुक्त किये जा रहे पारम्परिक और प्रचलित 'लुब्रिकेंट' का क्षारीय जल से मिल कर चट्टान जैसा बन जाने के कारण ड्रिलिंग नहीं हो पा रही थी। कम्पनी ने पंजाब विश्वविद्यालय में कार्यरत प्रोफेसर शांतिस्वरूप भटनागर से सम्पर्क कर मदद चाही। भटनागर ने समस्या पर विचार किया तो उन्हें श्यानता से जुड़ी समस्या नज़र आई। समाधान के रूप में उनके मन में एक अपारंपरिक आयडिया आया। उन्होंने कम्पनी को लुब्रिकेंट में 'इंडियन

गम' मिलाने का सुझाव दिया। जब सुझाव के अनुसार काम किया गया तो इसने श्यानता को कम कर दिया और आयडिया काम कर गया।

सापेक्षता से हमारा परिचय कोई नया नहीं है। 'चार अंधों और हाथी' की लोक कथा से हमें अपने जीवन में सापेक्षीय दृष्टि के महत्त्व का पता चलता है। चलती बस से धरती पर उगे पेड़ों का चलते हुए मिलना भी सापेक्षता-जन्य ही होता है। रेल्वे स्टेशन पर खड़े हो कर आती और जाती ट्रेन की सीटी की आवाज का क्रमशः बारीक और मोटा आभासित होना भी सापेक्षीय गति (ट्रेन और श्रोता के बीच) का परिणाम है। इस तरह सापेक्षीय प्रभाव हमें उन गतियों के दौरान मिलते हैं जिनसे हमारा वास्ता दैनिक जीवन में पड़ता है। लेकिन हमारे जीवन में 'प्रकाश' से जुड़े अनुभव भी होते हैं। 'प्रकाश' को एक स्थान से दूसरे तक जाने में नगण्य समय लगता है जिससे हम 'ध्वनि' की तुलना में 'प्रकाश' के बहुत अधिक वेग से परिचित होते हैं। लेकिन जब सैद्धांतिक विचार-विमर्श और प्रयोगों के दौरान पता चला कि हमारे सामान्य अनुभवों से सर्वथा अलग 'प्रकाश का वेग', 'स्रोत' अथवा 'दर्शक' की सापेक्षीय गति पर निर्भर न रहते हुए 'नियत' रहता है तो हमें आश्चर्य भर होता है। लेकिन, अलबर्ट आईंस्टीन को यहीं से एक आयडिया मिला। उन्होंने इसे प्रकृति का एक सच मानते हुए एक सैद्धांतिक तानाबाना बुन डाला। कई बार अंतःप्रेरणा से अचानक नये आयडिया मन-मस्तिष्क में आ जाते हैं। ऐसे आयडिया सर्वथा नयी दिशा दे सकते हैं। इतिहास ऐसे कई क्रांतिकारी आयडिया से भरा पड़ा है।

विलियम रेमसे

बार-बार सावधानीपूर्वक किये गये प्रयोगों के बावजूद उन्हें यही परिणाम मिला तो रेमसे को एक आयडिया आया कि अवश्य ही इसमें नाइट्रोजन से भारी कुछ और भी होना चाहिये। प्रयोग करने पर उन्हें सचमुच ही उसमें 'निष्क्रिय गैसों' की उपस्थिति मिली। आगे चल कर वे अपने इसी कार्य के कारण नोबेल पुरस्कार से सम्मानित हुए।

क्रांतिकारी आयडिया

अगर हम इतिहास पर नजर डालें तो हमें कई क्रांतिकारी आयडिया जन्म लेते हुए मिलते हैं। आईये, ऐसे ही कुछ आयडिया से परिचित होते हैं।

- एक बार कक्षा में श्रीनिवास रामानुजन ने अपने अध्यापक से पूछा कि क्या 0/0 का मान '1' होता है? उस समय शिक्षक 'भाग' देने की प्रक्रिया को समझा रहे थे। शिक्षक का उदाहरण देते हुए यह कहना था कि तीन केले अगर तीन बच्चों में बांटे जाएं तो प्रत्येक को एक-एक केला मिलता है। यानि, 3/3 का मान 'एक' होता है। इसके बाद रामानुजन ने उपर्युक्त प्रश्न पूछा। शिक्षक के पास इसका कोई जवाब नहीं था। लेकिन, उनके इसी जिज्ञासा भरे प्रश्न ने उनके मन में एक आयडिया को जन्म दिया जिसने उन्हें गणित में इतना रूचिशील बना दिया कि वे 'अनंत के ज्ञाता' बन गये। वे विश्व के इतने बड़े गणितज्ञ बन गये कि तात्कालीन महान गणितज्ञ जी.एच.हार्डी ने एक बार अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि 'मुझे संतोष है कि मैंने रामानुजन के साथ बराबरी के दर्जे पर काम किया है'।
- रसायनज्ञ विलियम रेमसे दो तरीकों से 'नाइट्रोजन' गैस को प्राप्त करने के प्रयोग कर रहे थे। एक तरीके में वे वायुमंडलीय हवा से इसे प्राप्त कर रहे थे तथा दूसरे में रासायनिक विधि से। लेकिन जब उन्होंने इन विधियों से प्राप्त नाइट्रोजन के घनत्व को मापा जो उन्हें हवा से प्राप्त नाइट्रोजन का घनत्व कुछ अधिक मिला। जब बार-बार सावधानी पूर्वक किये गये प्रयोगों के बावजूद उन्हें यही परिणाम मिला तो रेमसे को एक आयडिया आया कि अवश्य ही इसमें नाइट्रोजन से भारी कुछ और भी होना चाहिये। प्रयोग करने पर उन्हें सचमुच ही उसमें 'निष्क्रिय गैसों' की उपस्थिति मिली। आगे चल कर वे अपने इसी कार्य के कारण नोबेल पुरस्कार से सम्मानित हुए।
- सत्येन्द्रनाथ बोस को पढ़ाते समय 'कृष्णिका पिण्ड से प्राप्त स्पेक्ट्रम' को समझाने के लिए खोजे गये 'प्लांक के सूत्र' को निग्मित करने का तरीका अच्छा नहीं लगा तो उन्होंने सर्वथा नवाचारी तरीके से इस सूत्र को खोज डाला। उनका कार्य इतना क्रांतिकारी साबित हुआ कि विश्व के वैज्ञानिक समुदाय ने प्रकृति में मिलने वाले दो प्रकार के कणों में से एक का नाम 'बोसान' रख दिया।
- ल्यूवेनहॉक (Antonie Van Leeuwenhoek) कपड़े की एक दुकान पर काम करते थे। वहाँ वे 'लैंस' से कपड़े की परख करते थे। इसी से उनके मन में अन्य चीजों को देखने का आयडिया आया। शीघ्र ही वे जीवाणु और रक्त कोशिकाओं को देखने में सफल हो गए और दुनिया को जैव-जगत की आंतरिक संरचना को दिखाने में सफल हो गए।
- एक बार आर्किमिडिज को उनके राजा ने अपने मुकुट के सोने की शुद्धता को जाँचने के लिए कहा। लेकिन यह काम आसान नहीं था। उनके लिए यह अत्यंत कठिन समस्या थी। वे परेशान थे कि इस समस्या को हल करने का आयडिया उन्हें कुण्ड में नहाते समय अचानक मिल गया जब उन्होंने देखा कि जैसे ही वे कुण्ड में प्रवेश करते हैं, उसका जल-स्तर बढ़ने लगता है। अब उन्होंने उसी वजन

विलिस हेविलैंड कैरियर

छपाई उद्योग में काम करते हुए विलिस हेविलैंड कैरियर ने काम के दौरान देखा कि उनके कारखाने के काफी नमी होने से कागज गीले हो जाते हैं जिससे छपाई की गुणवत्ता प्रभावित होती है। इससे बचने का आयडिया उनके मन में रेल्वे प्लेटफार्म पर घूमते हुए 'कोहरे' को देख कर आया। 'कोहरे' के बनने की प्रक्रिया को समझने के दौरान उनके मन में एक ऐसी मशीन तैयार करने का आयडिया आया जो हवा को इतना ठंडा रख सके जिससे वातावरण की नमी उस पर संघनित हो कर बैठ जाये और कमरा नमी से मुक्त हो जाए। आगे चल कर कैरियर की यह मशीन छापखाने से निकल कर 'एअर कंडीशनर' के रूप में घरों और ऑफिस में पहुँच गई।

का शुद्ध सोने का एक मुकुट और बनवाया तथा पानी में डुबा कर 'आयतन' में मिलने वाले अंतर से सोने की शुद्धता का पता लगा लिया।

- वायुयान के आविष्कारक राइट बंधु को एक बार उनके पिता ने कॉर्क और बांस में फिट एक खिलौना दिया जो उड़ सकता था। इससे चकित उनकी कल्पना उलांचे मारने लगी। चिड़िया को देख कर सोचने लगे कि क्या इसी तरह आदमी नहीं उड़ सकता है? पक्षियों के विज्ञान पर उस समय की उपलब्ध पुस्तकों का अध्ययन करने से वे समझ गये कि पक्षियों की तरह उड़ना उनके बस में नहीं है। तब जिज्ञासा हुई कि तो फिर कैसे उड़ा जा सकता है? उस समय वे साइकिल की दुकान पर काम करते थे। तभी उनके दिमाग में फ़्लाइंग मशीन बनाने का विचार आया और वे वायुयान का आविष्कार कर सके।
- एक बार जगदीश चंद्र बसु को उनके बचपन में उनकी माँ ने कहा कि पेड़ों को रात में नहीं छेड़ना चाहिए क्योंकि वे सो रहे होते हैं। उनकी माँ ने इस बात को जब कहा था तब वैज्ञानिक दृष्टि से यह माना जाता था कि पेड़ों में प्राण नहीं होते हैं। लेकिन आगे चल कर माँ के इसी कथन से प्रेरित बोस के मन में इसे प्रमाणित करने का आयडिया आया। इसके लिये उन्होने कई उपकरणों का निर्माण किया तथा नवाचारी प्रयोगों के द्वारा वैज्ञानिक जगत को चकित कर दिया।
- छपाई उद्योग में काम करते हुए विलिस हेविलैंड कैरियर (Willis Haviland Carrier) ने काम के दौरान देखा कि उनके कारखाने के काफी नमी होने से कागज गीले हो जाते हैं जिससे छपाई की गुणवत्ता प्रभावित होती है। इससे बचने का आयडिया उनके मन में रेल्वे प्लेटफार्म पर घूमते हुए 'कोहरे' को देख कर आया। 'कोहरे' के बनने की प्रक्रिया को समझने के दौरान उनके मन में एक ऐसी मशीन तैयार करने का आयडिया आया जो हवा को इतना ठंडा रख सके जिससे वातावरण की नमी उस पर संघनित हो कर बैठ जाये और कमरा नमी से मुक्त हो जाए। आगे चल कर कैरियर की यह मशीन छापखाने से निकल कर 'एअर कंडीशनर' के रूप में घरों और ऑफिस में पहुँच गई।
- अपनी विदेश यात्रा के दौरान सी.वी. रमन को समुद्र के नीलेपन ने आकृष्ट किया और जल के अणुओं से प्रकाश के प्रकीर्णित होने का आयडिया दिया तो वहीं चंद्रशेखर सुब्रमनियम को आकाश को देखते हुए चिंतन-मनन ने तारों के जन्म की कहानी गढ़ने का आयडिया दिया। रमन और चंद्रशेखर के शोधों की अंतिम परिणति नोबेल पुरस्कार के रूप में हुई।
- मायकल फैराडे ने जब देखा कि 'विद्युत' से 'चुम्बकत्व' की प्राप्ति हो सकती है तो फिर 'चुम्कबकत्व' से 'विद्युत' की क्यों नहीं? और जब वे अपने इस आयडिया को व्यवहारिक धरातल पर उतारने में सफल हो गये तो दुनिया को बिजली प्राप्त करने का एक नया स्रोत 'डायनेमो' के रूप में मिल गया।
- युवा मेघनाद साहा को अपने विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए 'थर्मोडायनामिक्स' विषय पर क्लार्क द्वारा लिखित पुस्तक का अध्ययन करते समय एक रहस्यमय उलझन भरी पहेली की जानकारी मिली और उनके मन में परमाणु के आयनन की प्रक्रिया में 'ताप' के साथ 'दाब' की भूमिका होने का आयडिया आया। इसके बाद उन्होंने जिस 'साहा समीकरण' की खोज की उसने 'आधुनिक एस्ट्रोफिजिक्स' की नींव रख दी।
- अपनी बाल्यावस्था में अलबर्ट आईंस्टीन को उनके चाचा द्वारा दिए गये कम्पास ने जिज्ञासु बनाया। वे स्वयं से पूछने लगे कि चुम्बक को पास लाने पर कम्पास की सुई आखिर हिलती क्यों है, जबकि उसे छुआ तक नहीं जाता है?आगे चल कर इसी जिज्ञासा ने 'विद्युत चुंबकत्व' में उनकी गहरी रूचि जगाई। मैक्सवेल के सिद्धांत का अध्ययन करते समय उन्हें 'प्रकाश के वेग की निरपेक्षता' का संज्ञान हुआ। इस संबंध में माइकल्सन और मोर्ली द्वारा किये गये प्रयोगों से भी इसकी पुष्टि हुई। इसतरह उनके मन में पक्का विश्वास हो गया कि यह प्रकृति का एक सत्य है।अब इसे आधार बना कर एक सिद्धांत को विकसित करने का आयडिया उनके मन में आया। इसके

बाद उन्होंने जिस 'सापेक्षता के विशिष्ट सिद्धांत' को गढ़ा उसने विज्ञान के पारम्परिक आधारों को बदलते हुए नये विज्ञान को खड़ा करने के लिए आधार उपलब्ध कराया। इस सिद्धांत ने आकाश, काल और द्रव्यमान जैसी 'निरपेक्ष' मानी जा रही भौतिक राशियों को वेग पर निर्भर रहने वाली 'सापेक्षीय' राशि बना दिया। तर्क को विस्तार देते हुए उन्हें 'ऊर्जा और द्रव्यमान में तुल्यता' दर्शाने वाला एक समीकरण भी मिल गया जिससे विश्व को परमाणु की असीम शक्ति से परिचय मिला।

- राबर्ट गोडार्ड अमरीका में 'अंतरिक्ष युग के पिता' माने जाते हैं। एक बार बचपन में अपनी माँ को खुश करने के लिए उन्होंने कहा कि 'माँ, मैं तुम्हारे लिए आसमान से तारा तोड़ कर लाना चाहता हूँ'। यह बात उस समय तो आई गई हो गई लेकिन, आगे चल कर गोडार्ड के लिए आसमान से तारा तोड़ कर लाने वाला आयडिया उनके जीवन का लक्ष्य बन गया। वे अंतरिक्ष की दूरियों को मापने की क्षमता हासिल करने की तकनीक के लिए आवश्यक 'रॉकेट' बनाने के लिए प्रयोग करने लगे तथा लगातार मिल रही असफलताओं से सीखते रहे। अंततः वे 'द्रव-ईंधन' से चलने वाले प्रथम राकेट को विकसित करने में सफल हो गये। इसके बाद भी उन्होंने सोचना कभी बंद नहीं किया। उनकी डायरी में उन्होंने अधिक क्षमतावान रॉकेट के लिये भविष्य के ईंधन के रूप में तरल 'हाइड्रोजन' और तरल 'ऑक्सीजन' के उपयोग का उल्लेख कर रखा था। हालांकि वे स्वयं इसे कार्य रूप में परिणित करने के पूर्व ही चल बसे।
- कोंस्टनटिन सिओल्कोवस्की (Konstantin Tsiolkovsky) को उनकी माँ ने गुब्बारा दिया और कहा कि इसे ध्यान से पकड़ना। अगर यह छूट गया तो यह आसमान में चला जायेगा। यह सुनते ही उनके मन में आयडिया आया कि क्या गुब्बारे की तरह आसमान में जाया नहीं जा सकता? उन्होंने जेट प्रोपुल्शन (नोदन) का आयडिया दिया। उन्हें और भी कई आयडिया आते रहते थे। वे अपने आयडिया को शोधपत्रों के माध्यम से वैज्ञानिक जगत को परिचित कराते रहते। यह वह समय था जब अंतरिक्ष के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। ऐसे समय में वे अपने तर्क के बल पर यह बताते रहे कि 56-64 किलोमीटर की ऊँचाई के बाद निर्वात है, जहाँ रिएक्शन रॉकेट या इंजन के बिना काम नहीं चल सकेगा। उन्होंने तर्क के आधार पर यह भी बताया कि रॉकेट का धरती पर लौटना अत्यधिक जोखिम भरा कार्य होगा। उनके द्वारा तैयार किये गये 'ब्लूप्रिंट' के आधार पर अंतरिक्ष परियोजना पर सोवियत रूस में कार्य आरंभ हुआ। और सोवियत रूस ने पृथ्वी की कक्षा में अपने पहले उपग्रह 'स्पूतनिक'को स्थापित करने में सफलता प्राप्त की।

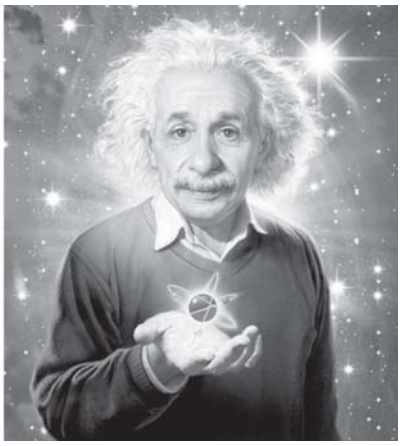

अलबर्ट आईंस्टीन

किसी भी गैसीय नमूने में परमाणुओं की 'पापुलेशन' अपनी मूल अवस्था ही अधिकतम रहती है। तभी अलबर्ट आईंस्टीन के मन में आयडिया आया कि अगर किसी नमूने में परमाणु अपनी किसी उत्तेजित अवस्था में अधिक देर तक ठहरें तो क्या इसका उलटा नहीं हो सकता यानि उत्तेजित परमाणुओं की पापुलेशन मूल अवस्था में रहने वाले परमाणुओं से अधिक नहीं हो सकती ? इसे आधार बना कर उन्होंने 'उद्दीपित उत्सर्जन' की जो कल्पना की उसने 'लेसर' की संभावना को जन्म दे दिया।

- अलबर्ट आईंस्टीन जब परमाणु द्वारा किये जाने वाले अवशोषण व उत्सर्जन की प्रक्रिया का अध्ययन कर रहे थे तब उनके संज्ञान में आया कि परमाणु उत्तेजित अवस्था में अत्यल्प समय तक ही ठहरता है तथा अपनी मूल अवस्था में लौट आता है। इसीलिए किसी भी गैसीय नमूने में परमाणुओं की 'पापुलेशन' अपनी मूल अवस्था ही अधिकतम रहती है। तभी उनके मन में आयडिया आया कि अगर किसी नमूने में परमाणु अपनी किसी उत्तेजित अवस्था में अधिक देर तक ठहरें तो क्या इसका उलटा नहीं हो सकता यानि उत्तेजित परमाणुओं की पापुलेशन मूल अवस्था में रहने वाले परमाणुओं से अधिक नहीं हो सकती? इसे आधार बना कर उन्होंने 'उद्दीपित उत्सर्जन' की जो कल्पना की उसने 'लेसर' की संभावना को जन्म दे दिया।
- जब एडविन हबल के प्रयोगों से ब्रह्माण्ड के लगातार फूलते रहने की जानकारी मिली तब जार्ज गैमो को बिंदुवत ब्रह्माण्ड के अस्तित्व में होने का आयडिया मिला और उन्होंने ब्रह्माण्ड के जन्म के लिए 'बिग बैंग सिद्धांत'को गढ़ दिया, जो आज मान्यता प्राप्त सिद्धांत है।
- सी.टी.आर. विल्सन को 'मेघ' बनने की प्रक्रिया से आयडिया मिला और उन्होंने मूल कणों को डिटेक्ट करने के लिए 'क्लाउड चैम्बर' का आविष्कार कर डाला। इसी तरह डोनाल्ड ए. ग्लेसर को 'बुलबुला' बनने की प्रक्रिया को देख कर 'बबल चैम्बर' बनाने का आयडिया आया। इनसे खोजे गये कणों ने 'कण भौतिकी' को स्थापित करने में अहम भूमिका निभाई।

- जब आईंस्टीन ने देखा कि 'व्यतिकरण' और 'विवर्तन' जैसी परिघटनाओं को प्रकाश की 'तरंग प्रकृति' के आधार पर और 'प्रकाश विद्युत प्रभाव' को उसकी 'कण प्रकृति' के आधार पर ही समझाया जा सकता है, तब उन्होंने प्रकाश की 'दोहारी प्रकृति' होने का आयडिया दिया। आगे चल कर डिब्रॉगली के मन में 'प्रकाश' की ही तरह 'पदार्थ' की भी दोहरी प्रकृति होने का आयडिया आया जिसने 'क्वांटम मेकेनिक्स' की नींव रखी।

ऐसे अनेकों उदाहरण हैं जो हमें आयडिया के जन्म लेने के स्रोतों से परिचित करवाते हैं। सच तो यह है कि इतिहास ऐसे अनेक क्रांतिकारी आयडिया से भरा है। इन आयडिया ने न सिर्फ अपने वर्तमान को ही प्रभावित किया वरन् भविष्य में विकास के लिए मार्गदर्शन भी दिया।

आयडिया दो प्रकार के होते हैं। एक वे जिनसे 'रोशनी' मिलती है और विज्ञान को आगे बढ़ने के लिए दिशा मिलती है और, दूसरे वे जिनसे 'फल या सिद्धि' मिलती है तथा टेक्नॉलॉजी की राह प्रशस्त होती है। लेकिन किसी भी प्रकार के आयडिया को विकसित करने और उसके क्रियान्वयन के दौरान लगातार विश्लेषण करते रहना जरूरी होता है ताकि अपने कदमों का लगातार मूल्यांकन हो सके तथा जरूरी हो तो समय रहते आवश्यक बदलाव किये जा सकें।

आयडिया का व्यवहारिक धरातल पर उतरना

वैसे तो कुछ न कुछ आयडिया सबको आते हैं। एक व्यक्ति को सैंकड़ों आयडिया भी आ सकते हैं। थॉमस अल्वा एडिसन इसके बेहतरीन उदाहरण हैं। उनके नाम सैंकड़ों 'पेटेंट' दर्ज हैं। लेकिन, आयडिया का आना कोई खास बात नहीं है। खास बात तो तब होती है जब वह आयडिया व्यवहारिक धरातल पर उतर कर अपने लोक कल्याणकारी स्वरूप में सामने आता है। अतः जब कोई आयडिया मिल जाए तब असली समस्या इसको व्यवहारिक धरातल पर उतारने और क्रियांवित करने की होती है।

आयडिया को विकसित करने के लिए क्या है जरूरी?

आयडिया को विकसित करने की शुरूआत वास्तविक परिस्थितियों तथा ज्ञात तथ्यों को ध्यान में रख कर होती है। फिर तर्क का तानाबाना बुनने लगता है और 'सिद्धांत' खड़ा होने लगता है। वह 'सिद्धांत' समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत करता है और नयी भविष्यवाणियाँ भी करता है।

आयडिया दो प्रकार के होते हैं। एक वे जिनसे 'रोशनी' मिलती है और विज्ञान को आगे बढ़ने के लिए दिशा मिलती है और, दूसरे वे जिनसे 'फल या सिद्धि' मिलती है तथा टेक्नॉलॉजी की राह प्रशस्त होती है। लेकिन किसी भी प्रकार के आयडिया को विकसित करने और उसके क्रियांवयन के दौरान लगातार विश्लेषण करते रहना जरूरी होता है ताकि अपने कदमों का लगातार मूल्यांकन हो सके तथा जरूरी हो तो समय रहते आवश्यक बदलाव किये जा सकें। इसके लिए गोडार्ड से सबक लिया जा सकता है। गोडार्ड अपने कार्यों के ब्यौरों को अपनी व्यक्तिगत डायरी में नियमित रूप से लिखते और उनका विश्लेषण करते रहते थे। एक बार वे अपनी 'रॉकेट' की कल्पना को मूर्त रूप देने के लिए एल्यूमीनियम की शीट से गुब्बारा बनाने के प्रयास कर रहे थे। 'रॉकेट्री' पर उनका यह प्रयास अपने घर की ही वर्कशाप में हो रहा था। वे करीब पाँच सप्ताह तक काम में जुटे रहे लेकिन, उन्हें सफलता नहीं मिल पा रही थी। अब उन्होंने अपनी डायरी के पन्नों को पलटा तथा अपने कार्यों का विश्लेषण किया तब उन्हें महसूस हुआ कि इस तरह काम करते हुए आगे बढ़ने से सफलता की कोई उम्मीद नहीं की जा सकती। इसके बाद उन्होंने बिना समय गंवाये अपनी रणनीति में बदलाव किया और नये तरीके से पुनः विचार करना आरंभ किया। इस तरह नियमित डायरी-लेखन और दस्तावेजीकरण की इस आदत के कारण असफलता से निराश होने की बजाय और अधिक विश्वास व दृढ़ निश्चय के साथ अन्य विकल्पों पर विचार करते हुए वे पुनः अपने काम में जुट जाते।

जब आयडिया व्यवहारिक धरातल पर उतारना बनता है लक्ष्य

सच तो यह है कि अपनी हर समस्या का समाधान भी अपने आसपास ही मौजूद रहता है। बस अपने दिमाग में बल्ब जलने भर की देर होती है। जब कोई क्रांतिकारी आयडिया मन में आता है तब सब चीजें गौण हो जाती हैं। एडिसन अपने घर के 'बेसमेंट' में बनी प्रयोगशाला में घंटों बैठे रहते थे। उन्हें न खाने की सुध रहती थी और न सोने की चिंता। कहते हैं कि 'विद्युत बल्ब' के व्यवहारिक मॉडल को विकसित करने के लिए उन्होंने करीब दस हजार आयडिया को परखा।

जब नील्स बोहर को परमाणु मॉडल को विकसित करने का आयडिया आया तब विश्व में 'औद्योगिक क्रांति' को लाने वाले 'स्टीम इंजन' की क्षमता को बढ़ाने पर कार्य चल रहा था। लेकिन इससे प्रभावित हुए बिना बोहर सब कुछ छोड़ कर 'परमाणु के मॉडल' को गढ़ने में

जुट गये। और, जब इस मॉडल ने 'हाइड्रोजन के स्पेक्ट्रम' को समझाने में सफलता प्राप्त कर ली तो वैज्ञानिक-जगत चकित रह गया। आगे चल कर उनके इसी आयडिया ने उन्हें नोबेल पुरस्कार विजेता बनाया।

जब जगदीश चंद्र बसु ने पेड़-पौधों में जीवन होने संबंधी आयडिया पर काम करना आरंभ किया तब भौतिकी करवट बदल रही थी और नित नयी खोजें हो रही थी। वे स्वयं 'बेतार के तार' की खोज के कारण एक लब्ध प्रतिष्ठित भौतिकविद् के रूप में विश्व में विख्यात थे। लेकिन उन्होंने पेड़-पौधों पर जिस तरह से वैज्ञानिक तरीकों को अपनाते हुए काम किया उसने न सिर्फ भारतीय प्राचीन ज्ञान-विज्ञान को सही साबित कर विश्व को नया मार्गदर्शन दिया वरन् पेड़-पौधों को जैव-दुनिया का सम्मानित सदस्य भी बना दिया। उनके गहन शोध का ही परिणाम रहा कि 'इलेक्ट्रोफिजियोलॉजी' नामक एक सर्वथा नया क्षेत्र उभर कर सामने आया।

समाधान में वे रहते हैं आगे जिनमें 'बच्चा' व 'युवा' जीवित रहता है

किसी भी समस्या के समाधान में 'बाल-सुलभ मस्तिष्क' और 'युवकोचित उत्साह' आवश्यक होता है। इसलिए समाधान खोजने वालों के अंदर एक 'बच्चा' और 'युवा' सदैव जीवित रहना चाहिए। समाधान हेतु 'उत्साह' के साथ 'समग्र दृष्टि' से सोचना जरूरी होता है। यह याद रखना पड़ता है कि कोई भी समस्या अकेले किसी एक विषय से संबंध नहीं रखती है और वह कई विषयों से जुड़ी भी हो सकती है। इसलिए इसमें 'पूर्वाग्रह' काम नहीं आता। बच्चे 'रेखा गणित' के एक 'बिंदु' की तरह होते हैं। 'बिंदु' से चाहे जितनी 'रेखाएं' चाहे जिस दिशा में खींची जा सकती हैं। बच्चों में बिना किसी बंदिश के ज्ञान का 'क्षैतिज-विस्तार' होता है। बच्चे 'बिगिनर्स माइण्ड' वाले होते हैं। इसलिए प्रकृति उन्हें नये रूप में दिखती है। वह उनके मन में कौतुहल जगाती है तथा आश्चर्य से भर देती है। इससे उनके मन में नये-नये विचार पैदा होने लगते हैं। उनके मन-मस्तिष्क में कई जिज्ञासा भरे प्रश्न उठने लगते हैं और फिर धीरे-धीरे उन्हें उत्तर मिलने लगते हैं जो अपने-अपने अंदाज मेंअभिव्यक्त होने लगते हैं। उनके मन-मस्तिष्क में विभिन्न समस्याओं के तकनीकी समाधान हेतु व्यवहारिक आयडिया की शृंखला उभरने लगती है। अगर कोई समस्या उनके दिमाग में पहले से ही मौजूद है या वे जिज्ञासु है तो उन्हें समाधान हेतु कई 'क्लू' मिलने लगते हैं। प्रकृति के रहस्यों को जानने के आकांक्षी ऐसे ही वैज्ञानिकों नेअपने आसपास फैले 'प्रकाश' को भी एक 'क्लू' के रूप में देखा और चिंतन-मनन के दौरान उनके मन में एक के बाद एक आयडिया आते चले गये जिन्हें विकसित करते हुए वे 'पदार्थ' और 'ब्रह्माण्ड' के रहस्यों को उद्घाटित करने में सफल हो गये।

हमारे पूर्वज-वैज्ञानिकों को मालूम था कि सामान्य पत्थर को रगड़ने पर वे गरम होते हैं। अब जरा सोचिए, अगर इस खोज के बाद वे रूक गये होते तो ? उन्होंने खोज जारी रखी तब उन्हें विशिष्ट प्रकार के पत्थर 'चकमक' मिले जिन्हें रगड़ने पर चिनगारी निकलते हुए मिली। बस क्या था, इससे उन्हें 'आग' लगाने का आयडिया मिल गया। यहाँ भी वे रूके नहीं। उन्होंने 'आग' से 'पानी' को 'भाप' बनते हुए देखा। और, 'भाप' की शक्ति से उन्हें 'इंजन' चलाने का आयडिया मिला। और, जब जैम्स वाट ने इसे व्यवहारिक रूप दिया तब इसी 'इंजन' ने दुनिया में 'औद्योगिक क्रांति' की शुरूआत कर दी। 'इंजन' बनाने का आयडिया उन्हें 'पहिये' से मिला और 'पहिये' का आयडिया उन्हें 'लुढ़कते पत्थर' से मिला।

उपलब्धियों के बाद भी वैज्ञानिक रूके नहीं

हमारे पूर्वज-वैज्ञानिकों को मालूम था कि सामान्य पत्थर को रगड़ने पर वे गरम होते हैं। अब जरा सोचिए, अगर इस खोज के बाद वे रूक गये होते तो? उन्होंने खोज जारी रखी तब उन्हें विशिष्ट प्रकार के पत्थर 'चकमक' मिले जिन्हें रगड़ने पर चिनगारी निकलते हुए मिली। बस क्या था, इससे उन्हें 'आग' लगाने का आयडिया मिल गया। यहाँ भी वे रूके नहीं। उन्होंने 'आग' से 'पानी' को 'भाप' बनते हुए देखा। और, 'भाप' की शक्ति से उन्हें 'इंजन' चलाने का आयडिया मिला। और, जब जैम्स वाट ने इसे व्यवहारिक रूप दिया तब इसी 'इंजन' ने दुनिया में 'औद्योगिक क्रांति' की शुरूआत कर दी। 'इंजन' बनाने का आयडिया उन्हें 'पहिये' से मिला और 'पहिये' का आयडिया उन्हें 'लुढ़कते पत्थर' से मिला। अगर इतना मिलने और अपनी दुनिया को आरामदायक बनाने के पश्चात वैज्ञानिकगण रूक गये होते तो? लेकिन, वे रूके नहीं। वे नये आयडिया को खोजते रहे और उन पर पर काम करते रहेतथा पुराने आयडिया को परिष्कृत करते रहे।

इस तरह वैज्ञानिकों ने 'स्थूल' दुनिया को देखा-समझा। कई उपलब्धियाँ हाँसिल की और अपने जीवन को सहज व आरामदायक बनाया। लेकिन अगर वे फिर यहीं रूक गये होते तो? वे नहीं रूके। पदार्थ को जानने की चाह में वैज्ञानिक और दार्शनिक उसे छोटा और

जब जार्ज बुल के मन में जब यह आयडिया आया कि '0' को 'ना' से और '1' को 'हाँ' माना जा सकता है तो तर्क की गणितीय अवधारणा सामने आ गई। इसने 'बुलियन एलजेब्रा' को जन्म दिया। इसके अनुप्रयोग का आयडिया 'इलेक्ट्रानिकी' के क्षेत्र में काम कर रहे वैज्ञानिकों को आया जिसने 'डिजिटल इलेक्ट्रॉनिकी' को जन्म दिया। अगर वैज्ञानिक 'बुलियन एलजेब्रा' पर ही पर रुक गये होते तो क्या 'डिजिटल इलेक्ट्रॉनिकी' आती ? और, क्या आज 'डिजिटल क्रांति' होती ? क्या हम ई–दुनिया में प्रवेश कर पाते ? क्या हमारे हाथों में 'स्मार्ट फोन' होते ? क्या आज दुनिया में 'ई–बैंकिंग' या 'केशलेस ट्रांजेक्शन' की बात होती ?

छोटा करते चले गये। वे 'परमाणु' तक पहुँच गये। और, अब अगर यहाँ वे सोचने लगते कि 'परमाणु' तो बहुत छोटा होता है जिसे देख पाना संभव नहीं है, तो क्या होता? लेकिन ऐसा हुआ नहीं और वे प्रयास करते रहे। उनकी कोशिशों का परिणाम रहा कि उन्हें 'परमाणु' में 'इलेक्ट्रॉन' मिल गया। अब अगर यहाँ वैज्ञानिक रूक गये होते तो? वे रुके नहीं। इसीलिये उन्हें तीन अलग-अलग दुनियाओं में प्रवेश के लिए रास्ते मिले। एक रास्ता तो उन्हें 'परमाणु' की भीतरी दुनिया में ले गया जहाँ उन्हें अत्यल्प सूक्ष्म 'नाभिक' मिला और 'नाभिक' में उन्हें 'प्रोटॉन' और 'न्यूट्रॉन' के साथ 'क्वार्क' के रूप में उनकी आंतरिक संरचना के प्रमाण भी मिले। दूसरा रास्ता उन्हें वहाँ ले गया जहाँ 'पदार्थ और प्रकाश के बीच होने वाली अंतःक्रिया' को समझना संभव हो सका। और, तीसरा रास्ता उन्हें 'इलेक्ट्रॉनिकी' की दुनिया में ले गया जहाँ 'इलेक्ट्रॉन' की गति और दिशा को नियंत्रित कर तकनीकी दुनिया में प्रवेश संभव हो सका। देखते ही देखते 'इलेक्ट्रॉनिकी' ने हमारे जीवन में प्रवेश कर 'जीवन-शैली' में आमूलचूल बदलाव ला दिया। लेकिन इस सफलता के बाद वैज्ञानिक रूके नहीं। उनकी शोध-यात्रा जारी रही और उनके मन में नये-नये विचार आते रहे। यही कारण रहा कि 'निर्वात नलिकाओं' पर आधारित बनी भारी-भरकम और पॉवर की दृष्टि से अत्यंत खर्चीली टेक्नॉलॉजी के स्थान पर 'ठोस अवस्था' पर आधारित हल्की और सस्ती टेक्नॉलॉजी विकसित हो सकी।

वैज्ञानिकों को आयडिया आते रहे और नित नये नवाचार होते गये। 'इलेक्ट्रॉनिकी' के क्षेत्र में कार्य करे वैज्ञानिकों का एक स्रोत 'संख्यात्मक ज्ञान' के लिए विकसित 'नम्बर सिस्टम' भी रहा। '0' तथा '1' से 'बायनरी सिस्टम' बनता है। इसमें प्रत्येक संख्या को इन्हीं 'दो' अंकों से अभिव्यक्त किया जाता है। जब जार्ज बुल के मन में जब यह आयडिया आया कि '0' को 'ना' से और '1' को 'हाँ' माना जा सकता है तो तर्क की गणितीय अवधारणा सामने आ गई। इसने 'बुलियन एलजेब्रा' को जन्म दिया। इसके अनुप्रयोग का आयडिया 'इलेक्ट्रानिकी' के क्षेत्र में काम कर रहे वैज्ञानिकों को आया जिसने 'डिजिटल इलेक्ट्रॉनिकी' को जन्म दिया। अगर वैज्ञानिक 'बुलियन एलजेब्रा' पर ही पर रूक गये होते तो क्या 'डिजिटल इलेक्ट्रॉनिकी' आती? और, क्या आज 'डिजिटल क्रांति' होती? क्या हम ई-दुनिया में प्रवेश कर पाते? क्या हमारे हाथों में 'स्मार्ट फोन' होते? क्या आज दुनिया में 'ई-बैंकिंग' या 'केशलेस ट्रांजेक्शन' की बात होती?

इस तरह हम देखते हैं कि एक सफलता मिलने के बाद वैज्ञानिकों और तकनीशियन अपने प्रयासों को कभी बंद नहीं करते। हमें भी अपने प्रयासों को कभी बंद नहीं करना चाहिए। अगर हमारे पास कोई तकनीकी आयडिया है तो इसे व्यवहारिक बनायें और सोचें कि आज के 'डिजिटल युग' में हम इसका कैसे 'मोबाइल एप' बना सकते हैं जो डिजिटल तकनीक के माध्यम से लोगों के जीवन को सहज बनाने के लिए आवश्यक भौतिक क्रियाओं को संचालित करने में सहायक बन सके। यह भी सोचें कि अपने आयडिया को और 'ग्रीनर' (पर्यावरण हितैषी) कैसे बनायें? हो सकता है कि हमारा आयडिया पहले से ही सस्ता और 'यूजर और ईको फ्रेंडली' हो, लेकिन फिर भी सोचें कि क्या इसे और अधिक सस्ता एवं यूजर और ईको फ्रेंडली बनाया जा सकता है?अगरकिसी समस्या का हल हमने खोज लिया हो तो भी सोचें कि क्या कोई और भी तरीके हो सकते हैं जिन्हें विकल्प के तौर पर आजमाया जा सकता है?

आज हमारा देश नयी उड़ानें भर रहा है। देश में 'मेक इन इन इंडिया' और 'स्टार्ट-अप' जैसी योजनाएँ चल रही हैं। कई समस्याओं के समाधान खोजे जा रहे हैं। ऐसे में नवाचारी आयडिया की बहुत जरूरत है। देश में प्रतिभा की कमी नहीं है और उनसे इन योजनाओं के लिये 'इनपुट मिलने की बहुत आशा है।

kapurmaljain@gmail.com

❑❑❑

पटरी पर दौड़ती मौत

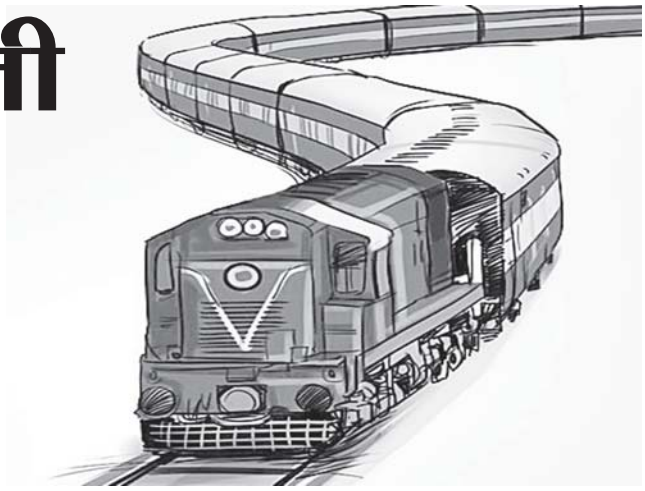

विजन कुमार पांडेय

मनुष्य ने यातायात के अनेक साधन विकसित किए हैं। उसमें रेलगाड़ी आवागमन का एक प्रमुख साधन है। रेलगाड़ी द्वारा यात्रा करने का अपना अलग ही आनंद होता है। लेकिन कभी-कभी लोगों की थोड़ी-सी असावधानी इस आनंद को एक बड़ी दुर्घटना का रूप दे देती है। यह बात पिछले वर्ष जनवरी माह की है जब मैं कालका मेल द्वारा इलाहाबाद से टुंडला की ओर यात्रा कर रहा था। रात्रि का पहला पहर था आधे लोग सो चुके थे तथा अन्य भी नींद लेने का प्रयास कर रहे थे। अचानक सभी ने एक बहुत जोर का झटका महसूस किया। क्षण भर में पूरा डिब्बा अस्त-व्यस्त हो गया। अन्य लोगों के साथ मैं भी वास्तविकता को जानने के लिए अपने डिब्बे से बाहर आया। बाहर आकर मैंने जो हृदय विदारक दृश्य देखा उससे मेरा रोम-रोम सिहर उठा। हमारी गाड़ी का इंजन सहित अन्य चार डिब्बे पटरी से उतर चुके थे। हमारी गाड़ी जिस अन्य गाड़ी से टकराई थी वह सवारी गाड़ी थी। सवारी गाड़ी के भी तीन डिब्बे पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो गए थे। चारों ओर अफरा-तफरी मची हुई थी। लोगों की चीख-पुकार से सारा आकाश गूँज उठा था। कोई इधर भाग रहा था तो कोई उधर। अधिकांश लोग अब भी असमंजस की स्थिति में थे कि वे क्या करें। मैं अपने सहयोगी यात्री के साथ दुर्घटनाग्रस्त डिब्बों के समीप गया। वहाँ के दृश्य तो रोंगटे खड़े कर देने वाले थे।

रेलवे का स्टेशन सबके मेल-मिलाप का एक आकर्षक स्थान होता है। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी, यहूदी सब ही दिखाई देते हैं। कोई किसी मित्र को लेने आता है, कोई किसी सम्बन्धी को छोड़ने आया है और स्वयं दिल्ली, कोलकत्ता, मुंबई जाने को तैयार है। स्टेशन में ज्यों ही गाड़ी आती है, पूरे स्टेशन में कोलाहल होने लगता है। कुली सामान उठाये इधर-उधर भागे फिरते हैं। यात्री अच्छे स्थानों के लिए बेचैन रहते हैं। यद्यपि एक कुली की मजदूरी प्रति फेरी निश्चित होती है, परन्तु भीड़-भाड़ में मुँह मांगी मजदूरी लेते हैं। स्टेशन के कर्मचारी भी अपने-अपने कर्त्तव्य में लीन दिखाई देते हैं। लेकिन ट्रेन पहुँचने से पहले ही अगर अपने बिछड़ जायें तो कितना दुख होता है उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता है। अभी यही घटना कानपुर के पास घटी।

कानपुर के पास इंदौर-पटना एक्सप्रेस रेल दुर्घटना ने एक बार फिर से रेलवे की सुरक्षा प्रणाली और रेल हादसे रोकने की दिशा में किए गए प्रयास के तमाम दावों पर सवालिया निशान लगा दिया है। भारत में रेल हादसों का इतिहास कोई नया नहीं है। हर

आजादी के समय देश में रेल ट्रैक की कुल लंबाई करीब 54 हजार किलोमीटर थी, जबकि आजादी के करीब सात दशक बाद अब देश में रेल ट्रैक की लंबाई (रोड लेंथ में) 66 हजार किलोमीटर है। अर्थात इन सात दशकों में रोड लेंथ के हिसाब से इसमें महज 12 हजार किलोमीटर का ही इजाफा हो पाया है। जबकि इस दौरान पटरियों पर यात्रियों का बोझ कई गुणा बढ़ गया।

भारत में रेल यातायात जिस तरह असुरक्षित हो गया है, वैसा कहीं नहीं है, जबकि हम तकनीकी तौर पर मजबूत देशों में शुमार होते हैं। कोई वर्ष ऐसा नहीं बीतता, जब कोई रेल दुर्घटना न हुई हो। रेल के पटरी से उतरने पर, दो रेलों के आपस में टकराने, पुल-पुलिया टूटने, पटरी उखडने और ऐसे कई कारणों से भीषण दुर्घटनाएं होती रही हैं, जिनमें कभी 40 लोगों की जान जाती है तो कभी 50 की। अब तो यह संख्या और भी बढ़ती ही जा रही क्योंकि ट्रेनों की आवाजाही और रफ्तार भी ज्यादा हो गई है।

एक रेल दुर्घटना के बाद रेलवे मंत्रालय एवं प्रशासन के द्वारा यात्रियों की सुरक्षा के प्रति दावे किए जाते हैं लेकिन अमल के स्तर पर गंभीर नजर नहीं आते। रेल हादसों के पीछे अमूमन रेलपटरियों का पुराना होना, सिग्नल में गड़बड़ी, कोहरा, मानवीय गलती तथा आतंकवादी वारदात जैसे कारण प्रमुख होते हैं। इस दुर्घटना में भी प्रथम दृष्टया यही नजर आता है कि पटरियों की देखभाल में कहीं न कहीं कुछ कमी जरूर हुई है। देश के अधिकांश भागों में रेल पटरियां काफी पुरानी व घिसी हुई हैं जिन्हें तुरंत बदला जाना जरूरी है। यह काफी खर्चीला लेकिन निरंतर चलने वाला काम है। जान-माल की सुरक्षा और समय का मूल्य देखते हुए इस दिशा में जल्द से जल्द कदम उठाना चाहिए। रेलयात्रियों की लगातार बढ़ती संख्या के कारण हर साल बड़ी संख्या में नई रेल चलाई जाती हैं जिस वजह से एक ही ट्रैक पर आने जाने वाली गाड़ियों का भार बढ़ता जाता है। इसलिए रेलमार्गो के नवीनीकरण व मरम्मत के लिए पर्याप्त राशि उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इसके साथ ही हजारों किमी लंबी रेल लाइन की सुरक्षा का प्रश्न भी बहुत महत्वपूर्ण है।

देश में रेल दुर्घटनाएँ क्यों होती हैं, इसकी वजह किसी से छुपी नहीं। आजादी के बाद जिस तरह से रेलवे का दोहन किया गया, उस अनुपात में उसकी सेहत का ध्यान नहीं रखा गया। नतीजन, रेलवे की हालत दिनों दिन खराब होती चली गयी। इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि आजादी के समय देश में रेल ट्रैक की कुल लंबाई करीब 54 हजार किलोमीटर थी, जबकि आजादी के करीब सात दशक बाद अब देश में रेल ट्रैक की लंबाई (रोड लेंथ में) 66 हजार किलोमीटर है। अर्थात इन सात दशकों में रोड लेंथ के हिसाब से इसमें महज 12 हजार किलोमीटर का ही इजाफा हो पाया है। जबकि इस दौरान पटरियों पर यात्रियों का बोझ कई गुणा बढ़ गया। हालांकि रेल मंत्रालय ट्रैकों के दोहरीकरण और तिहरीकरण को जोड़कर रेलपथ की कुल लंबाई एक लाख 15 हजार किलोमीटर बताता है। इसमें कई लाइनों को मीटर गेज यानि छोटी लाइन से ब्रॉड गेज यानि बड़ी लाइन में तब्दील किया गया है।

यहाँ केवल ट्रेनों के पटरी से उतरने की ही सवाल नहीं है। ट्रेनों के आपस में टकरा जाने, आग लगने, फिश प्लेट हटने, सिग्नल की खराबी, रेलवे क्रासिंग पर चौकीदारों का अभाव आदि वजहों से भी लगातार हादसे होते रहते हैं। अक्सर देखा गया है कि इंजन ड्राइवरों तथा अन्य स्टाफ पर काम का बहुत दबाव रहता है। रेलवे ड्राइवरों से लगातार काम कराए जाने की शिकायतें भी मिलती हैं। लगातार काम करने से थकावट आती है और उस स्थिति में मानवीय गलतियों की आशंका बढ़ जाती है। मगर जिस विभाग में सुरक्षा श्रेणी में ही तकरीबन डेढ़ लाख पद सालों से खाली पड़े हों, उससे सुरक्षा की कितनी उम्मीद की जा सकती है! आज रेलवे को आर्थिक रूप से ही नहीं, सुरक्षित यात्रा की दृष्टि से भी मजबूत करने की जरूरत है। दुनिया के कई देशों में लंबा-चौड़ा रेलतंत्र है, कभी-कभी दुर्घटनाएं भी होती हैं, लेकिन भारत में रेल यातायात जिस तरह असुरक्षित हो गया है, वैसा कहीं नहीं है, जबकि हम तकनीकी तौर पर मजबूत देशों में शुमार होते हैं। कोई वर्ष ऐसा नहीं बीतता, जब कोई रेल दुर्घटना न हुई हो। रेल के पटरी से उतरने पर, दो रेलों के आपस में टकराने, पुल-पुलिया टूटने, पटरी उखडने और ऐसे कई कारणों से भीषण दुर्घटनाएं होती रही हैं, जिनमें कभी 40 लोगों की जान जाती है तो कभी 50 की। अब तो यह संख्या और भी बढ़ती ही जा रही क्योंकि ट्रेनों की आवाजाही और रफ्तार भी ज्यादा हो गई है।

रेल हादसों का बाजार ऐसा लगता है जैसे भारतीय रेल हादसों का बाजार बन गई है। मई 2010 में पं.बंगाल में नक्सलियों की संदिग्ध वारदात के कारण ज्ञानेश्वरी एक्सप्रेस पटरी से उतरी थी, जिसमें 170 लोग मारे गए थे। उसके बाद शायद अभी कानपुर की दुर्घटना में सबसे ज्यादा हताहत हुए हैं। भारत में 2014-15 में 131 रेल हादसे हुए और इसमें 168 लोग मारे गए। 2013-14 में 117 ट्रेन हादसे हुए और इसमें 103 लोग मारे गए थे। 2014-2015 में 60 फ़ीसदी रेल दुर्घटना ट्रेनों के पटरी से उतरने के कारण हुई। 1956 से 66 के बीच 1,201 रेल हादसों में 962 दुर्घटना पटरी से उतरने के कारण हुई। इन ज़्यादातर रेल हादसों में मानवीय भूलों को ज़िम्मेदार ठहराया गया। भारत में अभी क़रीब 115,000 किलोमीटर रेलवे ट्रैक है। रेलवे मंत्रालय ने 2015 में अपने एक मूल्यांकन में बताया था कि 4,500 किलोमीटर रेलवे ट्रैक को दुरुस्त करने की ज़रूरत है। हालांकि फंड की कमी के कारण ये बेहद ज़रूरी काम नहीं हो रहे हैं। न तो नए ट्रैक का निर्माण हो रहा है और नहीं उन्हें बदला जा रहा है। 2015 में केवल 2,100 किलोमीटर ट्रैक के नवीकरण का लक्ष्य रखा गया था।

ट्रैक के फैलने-सिकुड़ने से भी हादसे भारतीय रेलवे में इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट के लिए गर्मी में ट्रैक का फैलना और सर्दियों में सिकुड़ना किसी दुःस्वप्न से कम नहीं है। 2014 में इस बात का उल्लेख रेलवे के एक आंतरिक ज्ञापन में किया गया था। इस साल जनवरी और मई महीने में रेलवे पटरी में गड़बड़ी के 136 मामलों को दुरुस्त किया गयाथा। जाड़े में रेलवे ट्रैक का तेज़ी से संकुचन होता है। इसके लिए रेलवे की तरफ़ से विंटर पट्रोलिंग शुरू की जाती है। इसमें पटरी के संकुचन की तहक़ीक़ात की जाती है। यहाँ समस्या केवल यही नहीं है। बेकार हो चुकी गाड़ियों को ट्रैक से बाहर करने के लिए फंड की भी ज़रूरत है। इन हादसों में गाड़ियों और ट्रेनों के टकराने के भी मामले हैं। इस समय देश में 10 हज़ार से ज़्यादा मानव रहित क्रॉसिंग हैं। रेलवे फंड और निवेश की कमी से बुरी तरह जूझ रहा है। रेलवे सुरक्षा के नाम पर निवेश में भारी कमी है। पिछले साल एक रिपोर्ट में स्वीकार भी किया गया था कि सुरक्षा को लेकर रेलवे में जितना निवेश होना चाहिए उतना नहीं हो रहा है।

ब्रेक पावर सर्टिफिकेट जरूरी किसी भी ट्रेन को चलाने से पहले उसे पूरी तरह से फिट होने का प्रमाण पत्र जारी किया जाता है। जिस स्टेशन से ट्रेन चलती है, वहाँ पर उसका प्राइमरी इंस्पेक्शन होता है। फिर जब ट्रेन गंतव्य तक पहुंचती है, वहाँ भी जांच होती है। इसे ब्रेक पावर सर्टिफिकेट कहा जाता है। यह सभी ड्राइवर को लेना जरूरी होता है।

रेलवे ट्रैक पर बढ़ता बोझ

बीते कुछ सालों से भारतीय रेलवे ट्रैक पर लोड बढ़ता जा रहा है। आम लोगों के ट्रैफिक के साथ माल ढुलाई का भी लोड बढ़ता जा रहा है। गुड्स ट्रेनें इन दिनों ओवर लोडेड चल रही हैं। अगर किसी गुड्स ट्रेन की क्षमता 78 टन की है, तो उस पर 80-85 टन माल की ढुलाई हो रही है। जिससे रेल ट्रैक के टूटने का ख़तरा बढ़ गया है। ऐसी संभावना है कि इंदौर-पटना एक्सप्रेस ट्रेन जिस ट्रैक से गुज़र रही थी, वहाँ कुछ समय पहले गुज़री गुड्स ट्रेनों के कारण भी क्रैक बन गए हों जिसके कारण इतना बड़ा हो गया।

लर्चिंग से हादसे

भारतीय रेलवे के सूत्रों के मुताबिक इंदौर-पटना एक्सप्रेस के ड्राइवर ने अपनी रिपोर्ट में लर्चिंग को हादसे की वजह बताया है। दरअसल किसी ट्रेन की दुर्घटना की तीन आम वजहें होती हैं-लर्च होना (गड्ढे के आने से वाहन का ऊपर नीचे या इधर-उधर होना), जर्क (अचानक झटका लगना) और तीसरा हैस्विंग (जब आपकी गाड़ी झूल जाती है)। ड्राइवरों को रेलवे ट्रैक के नीचे गड्ढा सा महसूस हुआ हो, यानी ट्रैक दब गया हो, तो भी ड्राइवर ऐसी रिपोर्ट देता है। रेलवे सूत्रों के मुताबिक जिस वक्त इंदौर-पटना ट्रेन के साथ हादसा हुआ, ट्रेन की रफ़्तार काफ़ी तेज़ थी। उससे ठीक पहले जो ट्रेन इस ट्रैक से गुज़री, उसकी स्पीड कम थी। ये भी बताया गया है कि इस रूट में पिछले कई महीनों के दौरान झांसी लोको शेड के कई ड्राइवर इसी जगह पर लर्चिंग महसूस कर रहे थे। आमतौर पर रेलवे ड्राइवर इस तरह की रिपोर्ट करने की ज़हमत नहीं उठाते इसलिए हादसे होने की संभावना और भी बढ़ जाती है।

ब्रेक पावर सर्टिफिकेट जरूरी किसी भी ट्रेन को चलाने से पहले उसे पूरी तरह से फ़िट होने का प्रमाण पत्र जारी किया जाता है। जिस स्टेशन से ट्रेन चलती है, वहाँ पर उसका प्राइमरी इंस्पेक्शन होता है। फिर जब ट्रेन गंतव्य तक पहुँचती है, वहाँ भी जाँच होती है। इसे ब्रेक पावर सर्टिफिकेट कहा जाता है। यह सभी ड्राइवर को लेना जरूरी होता है।

इंदौर-पटना एक्सप्रेस में एस-1 और एस-2 की बोगी को सबसे ज्यादा नुकसान हुआ है, पीछे की बोगियां इन पर जा चढ़ी। ऐसे में ये भी संभव है कि ट्रेन के किसी कोच में कोई गड़बड़ी रही हो। अब देखने वाली बात यह होगी कि हादसे वाली ट्रेन का इंदौर में पूरी तरह जांच हुई भी थी या नहीं। वैसे भारतीय रेल अपने रेलवे ट्रैक की निगरानी बड़े पैमाने पर करता है। निगरानी के लिए अलग से भी बजट होता है। पुरानी ट्रैक में मुश्किलें कभी भी आ सकती हैं। ट्रैक में इस तरह की खामियों को बेहतर क्वालिटी के स्टील ट्रैक के इस्तेमाल के ज़रिए ही दूर किया जा सकता है।

रेल ड्राइवर की व्यथा

रेल ड्राइवर की अपनी कई समस्या होती हैं। दरअसल उनकी सारी समस्याएँ तकनीकी होती हैं। रात में तो कभी-कभी ऐसा होता है कि 10 मीटर से आगे नहीं दिखता। इंजन में हेड लाइट से ड्राइवर को कम से कम 240 मीटर दिखना चाहिए। रात में अक्सर रोशनी कम रहती है। ऊपर से कुहासा छाया रहता है। सर्दियों में तो और मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। अचानक यदि कुछ सामने आ गया तो ड्राइवर पूरी तरह से लाचार हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह गाड़ी को रोक नहीं सकता। इमरजेंसी ब्रेक लगाने के सिवा कोई रास्ता ही नहीं बचता।

रेल सुरक्षा के लिए सबसे बड़ी समस्या है सेफ्टी स्टॉफ की कमी। एक अनुमान के मुताबिक ऐसे करीब एक लाख पद खाली पड़े हैं। रेलवे में सुरक्षा और संरक्षा की स्थिति का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि वर्ष 2003 से 2013 के दौरान रेल हादसे में दो हजार लोगों को जान गई। इन हादसों से रेलवे को 487 करोड़ रुपए का नुकसान हुआ।

इसके अलावा और भी कई तरह की तकनीकी समस्याओं का सामना ड्राइवरों को करना पड़ता है। उन्हें इंजन में जो फ्रेंडली कैब मिलने चाहिए वो भी नहीं मिलते हैं। वे आराम से बैठ नहीं सकते। ऐसे में वे आरामदायक तरीक़े से ड्राइव नहीं कर पाते। दरवाज़े टूटे रहते हैं, जिनसे सर्दियों में काफ़ी दिक्क़त होती है। ठंड लग रही होती है और वे गाड़ी चला रहे होते हैं। इस स्थिति में भी ड्राइवर का ध्यान बंटता है और हादसे होने की संभावना बढ़ जाती है।

दूसरी समस्या है आराम का और छुट्टियों की। ड्राइवरों को आराम करने का वक़्त नहीं मिलता। उन्हे 12 से 16 घंटे तक बाहर रहना पड़ता है। इन्हीं 12 से 16 घंटों में उनको रेस्ट भी करना है और परिवार को भी देखना होता है। इस स्थिति में कोई कितना रेस्ट कर पाएगा यह सोचने वाली बात है। कितने ड्राइवर को तो पूरी रात ड्यूटी करनी पड़ती है। स्टॉफ की कमी से कभी-कभी दो तीन रात जागना पड़ जाता है। इस तरह सामाजिक जीवन से वे बिल्कुल कट जाते हैं। उनकी सबसे बड़ी समस्या रेस्ट और छुट्टी की है। जब किसी व्यक्ति को आराम नहीं मिलेगा तो निश्चित रूप से उसकी एकाग्रता कम होगी और दुर्घटना घटेगी।

दरअसल रेल दुर्घटना का असर बाकी किसी भी हादसे से कईं गुना ज्यादा होता है। इसका सीधा कारण यात्रियों की संख्या है। भारत में अंतर्देशीय परिवहन के लिए रेल सबसे बड़ा माध्यम है। दुनिया के सबसे बड़े रेल नेटवर्क में से 13 हजार ट्रेनों में केवल भारत में हर रोज सवा दो करोड़ से भी ज्यादा यात्री सफर करते हैं। कुल 64,600 रूट के ट्रैक पर जरा-सी गफलत लाखों लोगों की जान को जोखिम में डाल सकती है। औसतन एक किमी ट्रैक करीब 19,133 यात्रियों का बोझ उठाता है यानि रेलवे पर यात्रियों का दबाव काफी अधिक है। ऐसे में इन पटरियों पर यात्रियों और इनके आसपास से गुजरने वालों की सुरक्षा पर खास ध्यान देने की जरूरत से इंकार नहीं किया जा सकता। लेकिन यह हो नहीं पाता और यही वजह है कि हर साल हादसों से दो-चार होना पड़ता है। यूं रेल बजट में हर बार यात्री सुविधाओं का वादा किया जाता है, लेकिन बिना सुरक्षा के कैसी सुविधा?

सरकार देश में तेज गति की रेल सेवायें देने की बात दोहराती रही है लेकिन उसके सामने इस समय वास्तविक चुनौती रेल सेवाओं को सुरक्षित बनाने की है। खास कर तब जब साल दर साल बचाव उपायों और रेल ढांचे के आधुनिकीकरण के प्रयास सरकारों की प्राथमिकताओं में पीछे छूट रहे हों। आज बढ़ती रेल दुर्घटनाओं के संबंध में रेल ढांचे के आधुनिकी कारण का सवाल ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है। हालिया अनुभव ये हैं कि मानवीय भूलों के साथ-साथ तकनीकी दिक्कतों और पुराने उपकरणों की कार्य प्राणाली में एकाएक खराबी के चलते रेल यात्रियों को अपनी जान गंवानी पड़ी है। इन वजहों को दूर करना रेलवे की प्राथमिकता होनी चाहिए, जबकि इसके विपरीत बीते सालों में बचाव उपायों और रेल ढांचे के आधुनिकी करण के लिए निर्धारित बजट में कटौती होती गईं है। साल 2013-14 में सुरक्षा और बचाव बजट में 2000 करोड़ रुपए को निकाल लिया गया, जबकि केवल 900 करोड़ रुपए निर्धारित किए गए। फरवरी 2012 में अनिल काकोडकर समिति ने रेलवे की यात्रा को सुरक्षित बनाने के लिए 1,03,110 करोड़ रुपए देने की सिफारिश की थी।

सेफ्टी स्टॉफ की कमी

रेल सुरक्षा के लिए सबसे बड़ी समस्या है सेफ्टी स्टॉफ की कमी। एक अनुमान के मुताबिक ऐसे करीब एक लाख पद खाली पड़े हैं। रेलवे में सुरक्षा और संरक्षा की स्थिति का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि वर्ष 2003 से 2013 के दौरान रेल हादसे में दो हजार लोगों को जान गई। इन हादसों से रेलवे को 487 करोड़ रुपए का नुकसान हुआ। संसदीय समिति की रिपोर्ट के मुताबिक 2003 से 2013 के दौरान 1,896 रेल हादसे हुए। अर्थात इस दौरान हर महीने औसतन 16 हादसे हुए। इसमें से 853 हादसे रेलवे कर्मचारियों की गलती के कारण हुए। हादसे की प्रमुख वजह आपसी टक्कर, पटरी से उतरना, लेवल क्रॉसिंग और आग है। जब भी कोईं बड़ा रेल हादसा होता है, रेल मंत्रालय की तरफ से सुरक्षा और बचाव के तमाम इंतजाम करने के वादे दोहराए जाते हैं। लेकिन उसपर अमल नहीं होता जिस कारण भारत में रेल हादसों की संख्या बढ़ती जा रही है।

vijonkumarpanday@gmail.com

खतरनाक वायरस का उत्पादन !

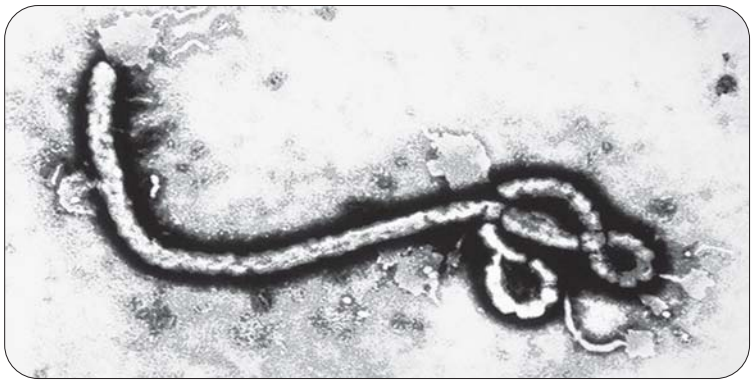

प्रमोद भार्गव

प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग मानव समुदाय को सुरक्षित बनाए रखने की दृष्टि से जो चेतावनियाँ दी हैं, उनमें एक चेतावनी जेनेटिकली इंजीनियरिंग अर्थात आनुवांशिक अभियंत्रिकी से खिलवाड़ करना भी है। आजकल खासतौर से अमेरिकी वैज्ञानिक विषाणु (वायरस) और जीवाणु (बैक्टीरिया) से प्रयोगशालाओं में छेड़छाड़ कर एक तो नए विषाणु व जीवाणुओं के उत्पादन में लगे हैं, दूसरे उनकी मूल प्रकृति में बदलाव कर उन्हें और ज्यादा सक्षम बना रहे हैं। इनका उत्पादन मानव स्वास्थ्य के हित के बहाने किया जा रहा है। लेकिन ये बेकाबू हो गए तो तमाम मुश्किलों का भी सामना करना पड़ सकता है? कई देश अपनी सुरक्षा के लिए घातक वायरसों का उत्पादन कर खतरनाक जैविक हथियार भी बनाने लग गए हैं। गोया इनकी सुरक्षा का बड़ा सवाल भी मुंहबाए खड़ा है।

हॉलीवुड में ऐसी अनेक फिल्में बन चुकी हैं, जिनमें आनुवांशिक रूप से परिवर्धित किए विषाणु व जीवाणुओं के प्रकोप दिखाए गए हैं। लेकिन फिल्मों की यह परिकल्पना अब प्रयोगशालाओं की वास्तविकता में बदल गई है। 2014-15 में फैले इबोला वायरस ने ही हजारों लोगों के प्राण लील लिए थे। जबकि इबोला प्राकृतिक वायरस था। इबोला की सबसे पहले पहचान 1976 में सूड़ान और कांगों में हुई थी। अफ्रीकी देश जैरे की एक नन के रक्त की जांच करने पर एक नए विषाणु इबोला का ज्ञान हुआ था। यह नन पीले ज्वर (यलो-फीवर) से पीड़ित थी। करीब 40 साल तक शांत पड़े रहने के बाद एकाएक इस विषाणु का संक्रमण सहारा अफ्रीका में फैलना शुरू हुआ। इसके बाद इसका हमला पश्चिम अफ्रीका के इबोला में हुआ। जहाँ से यह बीमारी अन्य अफ्रीकी मुल्कों में फैली। इबोला के विषाणु संक्रमित जानवर से मनुष्य में फैलते हैं। हालांकि यह महामारी में बदलता इससे पहले इसे काबू में ले लिया गया था। जब इबोला वायरस बड़ा तांडव रचने में कामयाब हो सकता है तो जेनेटिक इंजीनियर्ड वायरस तो वर्ण संकर होने के कारण भयंकर तबाही मचा सकता है? बावजूद प्रयोगशालाओं में विषाणु-जीवाणु उत्पादित करने के प्रयोग चल रहे हैं।

अमेरिका के विस्कोसिन-मेडिसन विवि के वैज्ञानिक योशिहिरो कावाओका ने स्वाइन फ्लू के वायरस के साथ छेड़छाड़ कर उसे इतना ताकतवर बना दिया है कि मनुष्य शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकती। मसलन मानव प्रतिरक्षा तंत्र उस पर बेअसर रहेगा। यहाँ सवाल उठता है कि खतरनाक विषाणु को आखिर और खतरनाक बनाने का औचित्य क्या है? कावाओका का दावा है कि उनका प्रयोग 2009 एच-1, एन-1 विषाणु में होने वाले बदलाव पर नजर रखने के हिसाब से नए आकार में ढाला गया है। वैक्सीन में सुधार करने के लिए उन्होंने वायरस को ऐसा बना दिया है कि मानव की रोग प्रतिरोधक प्रणाली से बच निकले। मसलन रोग के विरुद्ध मनुष्य को कोई संरक्षण हासिल नहीं है। कावाओका ने यह भी दावा किया था कि उन्होंने 2014 में रिर्वस जेनेटिक्स तकनीक का प्रयोग कर 1918 में फैले स्पेनिश फ्लू जैसा जीवाणु बनाया है, जिसकी वजह से प्रथम विश्व युद्ध के बाद 5 करोड़ लोग मारे गए थे। पोलियो, रैबिज

और चिकनपॉक्स जैसे घातक रोगों के वैक्सीन पर उल्लेखनीय काम करने वाले वैज्ञानिक स्टेनली प्लॉटकिन ने भी कावाओका के काम के औचित्य पर सवाल उठाते हुए कहा था, 'ऐसी कोई सरकार या दवा कंपनी है, जो ऐसे रोगों के विरुद्ध वैक्सीन बनाएगी जो वर्तमान में मौजूद ही नहीं हैं ? कावाओका द्वारा प्रयोगशाला में उत्पादित किए जा रहे, इन खतरनाक वायरसों के बारे में रॉयल सोसायटी के पूर्व अध्यक्ष व ब्रिटिश सरकार के पूर्व विज्ञान सलाहकार लॉर्ड-मे ने भी इन प्रयोगों पर गहरी आपत्ति जताई थी। उन्होंने इन प्रयोगों को पागलपन करार देते हुए, यहाँ तक कहा था कि 'यह प्रक्रिया बेहद खतरनाक है और यह खतरा प्राणियों में मौजूद वायरस से नहीं, अत्याधिक महत्वाकांक्षी वैज्ञानिकों की प्रयोगशालाओं से निकलने वाले वायरसों से है।' दरअसल विषाणु या जीवाणु में वैज्ञानिक कोई आनुवांशिक रूप से परिवर्तन करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसे बदलाव करना चाहिए जो मानव समुदाय के साथ समस्त जीव-जगत के लिए लाभदायी हों ?

हम आए दिन नए-नए बैक्टीरिया व वायरसों के उत्पादन के बारे खबरें पढ़ते रहते हैं। हाल ही में त्वचा कैंसर के उपचार के लिए टी-वैक थैरेपी की खोज की गई है। इसके अनुसार शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को ही विकसित कर कैंसर से लड़ा जाएगा। इस सिलसिले में स्टीफन हॉकिंग सचेत करते हैं कि इस तरीके में बहुत जोखिम है। क्योंकि जीन को मोडीफाइड करने के दुष्प्रभावों के बारे में अभी तक वैज्ञानिक खोजें न तो बहुत अधिक विकसित हो पाई हैं और न ही उनके निष्कर्षों का सटीक परीक्षण हुआ है। उन्होंने यह भी आशंका जताई थी कि प्रयोगशालाओं में जीन परिवर्धित करके जो विषाणु-जीवाणु अस्तित्व में लाए जा रहे हैं, हो सकता है, उनके तोड़ के लिए किसी के पास एंटी बायोटिक ही न हों?

कुछ समय पहले खबर आई थी कि जेनेटिकली इंजीनियर्ड अभियांत्रिकी से ऐसा जीवाणु तैयार कर लिया है, जो 30 गुना ज्यादा रसायनों का उत्पादन करेंगे। जीन में बदलाव करके इस जीवाणु के अस्तित्व को आकार दिया गया है। माना जा रहा है कि यह एक ऐसी खोज है, जिससे दुनिया की रसायन उत्पादन कारखानों में पूरी तरह जेनेटिकली इंजीनियर्ड बैक्टीरिया का ही उपयोग होगा। विस इंस्टीट्यूट फॉर बॉयोलॉजिकली इंस्पायर्ड इंजीनियंरिंग और हावर्ड मेडिकल स्कूल के शोधकर्ताओं के दल ने यह शोध किया है। अनुवांशिकविद जॉर्ज चर्च के नेतृत्व में किए गए इस शोध के तहत बैक्टीरिया के जींस को इस तरीके से परिवर्धित किया गया, जिससे वे इच्छित मात्रा में रसायन का उत्पादन करें। बैक्टीरिया अपनी मेंटाबॉलिक प्रक्रिया के तहत रसायनों का उत्सर्जन करते हैं। यह तकनीक हालांकि नई नहीं है। लेकिन नई खोज से ऐसी तकनीक विकसित की गई है, जिससे वैज्ञानिक किसी भी तरह के बैक्टीरिया का इस्तेमाल करके अनेक प्रकार के रसायन तैयार कर सकेंगे।

इस शोध के लिए वैज्ञानिकों ने ई-कॉली नामक बैक्टीरिया का इस्तेमाल किया है। इसमें बदलाव के लिए इवोल्युशनरी मैकेनिज्म को उपयोग में लाया गया। दरअसल जीवाणु एक कोशकीय होते हैं, लेकिन ये स्वयं को निरंतर विभाजित करते हुए अपना समूह विकसित कर लेते हैं। वैज्ञानिक इन जीवाणुओं पर ऐसे एंटीबायोटिक्स का प्रयोग करते हैं, जिससे केवल उत्पादन क्षमता रखने वाली कोशिकाएं ही जीवित रहें। इन कोशिकाओं के जीन में बदलाव करके ऐसे रसायन उत्पादन में सक्षम बनाया जाता है, जो उसे एंटिबायोटिक से बचाने में सहायक होता है। ऐसे में एंटीबायोटिक का सामना करने के लिए बैक्टीरिया को ज्यादा से ज्यादा रसायन का उत्पादन करना पड़ता है। रसायन उत्पादन की यह रफ्तार एक हजार गुना ज्यादा होती है। यह खोज 'सर्वाइवल ऑफ फिटेस्ट' के सिद्धांत पर आधारित है। इस सिद्धांत के अनुरूप यह चक्र निरंतर दोहराए जाने पर सबसे ज्यादा उत्पादन करने वाले चुनिंदा जीवाणुओं की कोशिकाएं ही बची रह जाती हैं। मानव शरीर में उनका उपयोग रसायनों की कमी आने पर किया जा सकेगा, ऐसी संभावना जताई जा रही है। इस खोज से फार्मास्युटिकल बायोफ्यूल और अक्षय रसायन भी तैयार होंगे। लेकिन मानव शरीर में इसके भविष्य में क्या खतरे हो सकते हैं, यह प्रश्न फिलहाल अनुत्तरित ही है।

इसीलिए इन विषाणु व जीवाणुओं के उत्पादन पर यह सवाल उठ रहा है कि क्या वैज्ञानिकों को प्रकृति के विरुद्ध विषाणु-जीवाणुओं की मूल प्रकृति में दखलदांजी करनी चाहिए ? दूसरे यह कि प्रयोग के लिए तैयार किए गए ऐसे जीवाणु व विषाणु कितनी सुरक्षा में रखे गए हैं ? यदि वे जान-बूझकर या दुर्घटनावश बाहर आ जाते हैं, तो इनके द्वारा जो नुकसान होगा, उसकी जबावदेही किस पर होगी? ऐसे में वैज्ञानिकों की ईश्वर बनने की महत्वाकांक्षा पर यह सवाल खड़ा होता है कि आखिर वैज्ञानिकों को अज्ञात के खोज की कितनी अनुमति दी जानी चाहिए? क्योंकि अंततः ज्ञान की सीमा एक ऐसी अंधेरे में की जा रही अनंत गहराई है, जिसके खतरों की डोर आखिर में मनुष्य से ही जुड़ जाती है।

pramod.bhargava15@gmail.com

❑❑❑

हरित क्रांति और मृदा स्वास्थ्य

डॉ.दिनेश मणि

एक अनुमान के अनुसार मृदा के 340 लाख टन प्रतिवर्ष प्रमुख पोषक तत्वों– नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश का दोहन होता है और उर्वरकों के माध्यम से केवल 260 लाख टन की आपूर्ति हो पाती है। इस प्रकार 80 लाख टन पोषक तत्वों की कमी प्रतिवर्ष हो रही है। इस कारण मृदा की उर्वरता लगातार घट रही है। मृदा से पोषक तत्वों के लगातार दोहन के साथ–साथ अपर्याप्त व असंतुलित उर्वरक उपयोग के परिणामस्वरूप गौण व सूक्ष्मपोषक तत्वों की कमी आई है।

इस तथ्य में कोई सन्देह नहीं कि हरित-क्रान्ति के दौरान देश में खाद्यान्न उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई तथा अन्न की कमी से उबरने में सहायता मिली। परन्तु यह भी सच है कि निरन्तर सघन खेती अपनाने रासायनिक उर्वरकों पर अति निर्भरता तथा कार्बनिक खादों की सतत उपेक्षा के कारण मृदा की उर्वरा शक्ति व कार्बनिक अंश में कमी आ गई तथा मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग के बावजूद फसल की उत्पादकता में कमी देखी जा रही है। अतः हमें अपनी वर्तमान कृषि प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता है। कृषि उत्पादन की एक टिकाऊ व्यवस्था बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करते हुए पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति के अन्य विकल्पों को पोषक तत्व प्रबंधन में सम्मिलित करने की आवश्यकता है। अतः रासायनिक उर्वरकों के अतिरिक्त कार्बनिक स्रोत के माध्यम से पोषक तत्व आपूर्ति एक उचित विकल्प है। पोषक तत्वों के संतुलित प्रयोग के अलावा रासायनिक व कार्बनिक/जैविक स्रोतों का समन्वित प्रयोग व उनकी उपयोग क्षमता में वृद्धि द्वारा ही हम टिकाऊ कृषि की ओर अग्रसर हो सकते हैं। इस समय देश में 14-20 करोड़ हेक्टेअर क्षेत्र में खेती की जा रही है। यह भूमि भी धीरे-धीरे कम होती जा रही है। अनुमान है कि वर्ष 2025 में भारत की आबादी 150 करोड़ हो जाएगी, तब वर्तमान उत्पादकता के आधार पर खाद्यान्न की जरूरतें पूरी करनी है, तो उसे 2025 तक कम से कम 3 करोड़ टन नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश की जरूरत पड़ेगी। यह उर्वरक भी तभी पर्याप्त होगा जब जैव-उर्वरक और गोबर की खाद का पर्याप्त उपयोग किया जाए और यह सर्वत्र सामान्य रूप से उपलब्ध हो। अभी रासायनिक उर्वरकों के मामले में भारी असंतुलन है। जहाँ पंजाब में 167 किलोग्राम उर्वरक प्रति हेक्टेअर इस्तेमाल किया जाता है, वहीं असम में इसका सिर्फ 2 किलोग्राम प्रति हेक्टेअर ही है।

सघन खेती वाले क्षेत्रों में मृदा की उर्वरा शक्ति में कमी परिलक्षित हो रही है। एक

चीन में गेहूँ–धान फसल चक्र में पिछले एक सौ साल से ज्यादा समय से उत्पादकता का ऊँचा स्तर बनाए रखने में इसीलिए सफलता मिल पाई, क्योंकि वहाँ नाइट्रोजन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए 50 प्रतिशत से अधिक नाइट्रोजन कार्बनिक स्रोत से प्राप्त की गई। इसी फसल प्रणाली में हमारे यहाँ रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग ने तीन दशकों में ही ठहराव की स्थिति उत्पन्न कर दी। इससे समेकित पोषक तत्व प्रबंध के महत्व का पता लगता है।

अनुमान के अनुसार मृदा के 340 लाख टन प्रतिवर्ष प्रमुख पोषक तत्वों- नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश का दोहन होता है और उर्वरकों के माध्यम से केवल 260 लाख टन की आपूर्ति हो पाती है। इस प्रकार 80 लाख टन पोषक तत्वों की कमी प्रतिवर्ष हो रही है। इस कारण मृदा की उर्वरता लगातार घट रही है। मृदा से पोषक तत्वों के लगातार दोहन के साथ-साथ अपर्याप्त व असंतुलित उर्वरक उपयोग के परिणामस्वरूप गौण व सूक्ष्मपोषक तत्वों की कमी आई है। वर्तमान में भारतीय मृदाओं में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, सल्फर, जिंक और बोरॉन की कमी क्रमशः 79, 80, 50, 40, 48 और 33 प्रतिशत है जिसके कारण मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। अधिक उपज देने वाली फसलों और संकरों के प्रचलन के बाद अधिक पैदावार लेने के लिए प्रतिस्पर्धा ऐसी बढ़ी कि हमारा ध्यान इस बात की ओर गया ही नहीं कि यह प्रणाली कब तक चल पायेगी। इसी का नतीजा है कि ये सारी प्रणालियाँ जवाब दे चुकी हैं और उत्पादकता के स्तर को घटाने वाली नई-नई समस्याएं उभरने लगी हैं। इस तरह की कुछ समस्याएँ हैं- पोषक तत्वों की दक्षता में कमी, मिट्टी में अनेक पोषक तत्वों का असंतुलन, मिट्टी के भौतिक, रासायनिक गुणों में प्रतिकूल परिवर्तन, पानी का दुरूपयोग, मिट्टी और पानी का प्रदूषण और कीटव्याधिक रोगों व खरपतवारों की सांठगांठ। इन समस्याओं से निपटने के लिए जहाँ हम एक ओर फसलों की सघनता का ध्यान रख रहे हैं, वहीं देश के विभिन्न भागों के लिए फलदार फसलों को शामिल करते हुए ऐसी फसल प्रणालियाँ विकसित करने लगे हैं जो हर हाल में टिकाऊ साबित हो। अधिक मूल्य वाली फसलों में चुने गये फसल-चक्रों में मुख्य रूप से सूरजमुखी, सोयाबीन, मूँगफली, सरसों और बासमती धान इत्यादि शामिल किए गये हैं। इसी तरह कृषि की उत्पादकता और टिकाऊपन को ध्यान में रखते हुए समेकित पोषक प्रबंध और समेकित कीट प्रबंध की तकनीकों का अधिकाधिक प्रचलन किया जा रहा है। पानी की बचत के लिए कृषि में प्लास्टिक के उपयोग द्वारा छिड़काव एवं रिसाव सिंचाई प्रणाली के उपयोग की संभावनाओं पर भी हम विशेष ध्यान दे रहे हैं।

सघन कृषि प्रणालियों के कारण मौलिक संसाधनों का अंधाधुंध इस्तेमाल हुआ है और मिट्टी में फसल के अवशेष शायद ही छोड़े जाते हैं। इस तरह मिट्टी में जीवांश की कमी होने से उसकी उपजाऊ शक्ति दिनोंदिन घटती जा रही है। इसी का नतीजा है कि गेहूँ-धान, धान-धान इत्यादि मुख्य फसल आधारित चक्रों में उपज का स्तर एक सीमा तक बढ़ने के बाद अब ठहराव पर पहुँच गया है। दीर्घकालीन उर्वरता परीक्षणों से भी यह सिद्ध हुआ है कि अकार्बनिक खादों के साथ-साथ कार्बनिक खादों का उपयोग करने पर भी मिट्टी की उर्वरता को टिकाऊ स्तर पर बनाए रखा जा सकता है। चीन में गेहूँ-धान फसल चक्र में पिछले एक सौ साल से ज्यादा समय से उत्पादकता का ऊँचा स्तर बनाए रखने में इसीलिए सफलता मिल पाई, क्योंकि वहाँ नाइट्रोजन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए 50 प्रतिशत से अधिक नाइट्रोजन कार्बनिक स्रोत से प्राप्त की गई। इसी फसल प्रणाली में हमारे यहाँ रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग ने तीन दशकों में ही ठहराव की स्थिति उत्पन्न कर दी। इससे समेकित पोषक तत्व प्रबंध के महत्व का पता लगता है।

अधिक उपज देने वाली फसलों और संकरों के प्रचलन के बाद अधिक पैदावार लेने के लिए प्रतिस्पर्धा ऐसी बढ़ी कि हमारा ध्यान इस बात की ओर गया ही नहीं कि यह प्रणाली कब तक चल पायेगी। इसी का नतीजा है कि ये सारी प्रणालियाँ जवाब दे चुकी हैं और उत्पादकता के स्तर को घटाने वाली नई-नई समस्याएँ उभरने लगी हैं। इस तरह की कुछ समस्याएँ हैं- पोषक तत्वों की दक्षता में कमी, मिट्टी में अनेक पोषक तत्वों का असंतुलन, मिट्टी के भौतिक, रासायनिक गुणों में प्रतिकूल परिवर्तन, पानी का दुरूपयोग, मिट्टी और पानी का प्रदूषण और कीटव्याधिक रोगों व खरपतवारों की सांठगांठ। इन समस्याओं से निपटने के लिए जहाँ हम एक ओर फसलों की सघनता का ध्यान रख रहे हैं, वहीं देश के विभिन्न भागों के लिए फलदार फसलों को शामिल करते हुए ऐसी फसल प्रणालियाँ विकसित करने लगे हैं जो हर हाल में टिकाऊ साबित हो। अधिक मूल्य वाली फसलों में चुने गये फसल-चक्रों में मुख्य रूप से सूरजमुखी, सोयाबीन, मूँगफली, सरसों और बासमती धान इत्यादि शामिल किए गये हैं। इसी तरह कृषि की उत्पादकता और टिकाऊपन को ध्यान में रखते हुए समेकित पोषक प्रबंध और समेकित कीट प्रबंध की तकनीकों का अधिकाधिक प्रचलन किया जा रहा है। पानी की बचत के लिए कृषि में प्लास्टिक के

उपयोग द्वारा छिड़काव एवं रिसाव सिंचाई प्रणाली के उपयोग की संभावनाओं पर भी हम विशेष ध्यान दे रहे हैं।

मानव समाज की जरूरत केवल अनाज तक ही सीमित नहीं है। हमें आवास के लिए भूमि चाहिए, पशुओं के लिए चारा चाहिए, ईधन आदि की जरूरत भी है। इमारती लकड़ी आदि की जरूरत भी है और इसी प्रकार विविध कृषि कार्यों के लिए लकड़ी चाहिए। कहने का मतलब यह है कि कृषि क्षेत्रफल में और वृद्धि करना असम्भव है। इससे एकमात्र दो हल हो सकते हैं। पहला, खाद्यान्न फसलों की उत्पादकता बढ़ाकर अधिक पैदावार लेना और दूसरा हल है, विभिन्न राज्यों में लाखों हेक्टेअर बेकार बंजर/ऊसर भूमि को उपजाऊ बनाकर अनाज पैदा करना।

साधनों की उपयोग की दृष्टि से हमारी यह शताब्दी एक अपव्ययी शताब्दी रही हैं जनसंख्या की तीव्रवृद्धि के साथ-साथ पृथ्वी के साधन स्रोतों का उपयोग, जिस तीव्रगति से हुआ है, विश्व के ज्ञात इतिहास में उसका कोई मुकाबला नहीं है। मृदा इसका अपवाद नहीं है। इसका भी भरपूर दोहन किया गया है। आहार की खोज में पृष्ठ मृदा, (जिसमें मानव आहार हेतु अन्न, पशु आहार हेतु चारे और वस्त्र हेतु रेशों के उत्पादन के लिये सारी आवश्यक उर्वरता निहित होती है) का उपयोग पीढ़ी दर पीढ़ी ऐसे ढंग से किया जाता रहा है, जो पोषक संरक्षण या अनिवार्य उर्वरता के अनुरक्षण की दृष्टि से अत्यन्त हानिकारक है। इससे मानव के समक्ष विशेषकर विश्व के घनी आबादी वाले इलाकों जैसे भारत के सामने एक कठिन स्थिति पैदा हो गयी है, क्योंकि ऐसे इलाकों में खाद्य अभाव और बढ़ती हुयी जनसंख्या की समस्याओं से हर आदमी विचलित है। जहाँ तक उर्वरता का प्रश्न है, मृदा एक ऐसा प्राकृतिक साधन स्रोत है, जिसका नवीनीकरण स्वतः होता रहता है। लेकिन मृदा के अत्यधिक उपयोग और दूरूपयोग से मानव ने इस प्राकृतिक सन्तुलन को बिगाड़ दिया है। मानव ने जितना कुछ मृदा से प्राप्त किया है उतना निष्ठापूर्वक पोषक तत्वों के रूप में मृदा को लौटाया नहीं है। मृदा के बारे में हमारी मूलभूत या बुनियादी जानकारी तीव्र दर से बढ़ी है, लेकिन मृदा प्रबन्ध की कुशलता किसानों में बहुत मन्द गति से आ रही है जिसके कारण मृदा उर्वरता में तीव्र गिरावट आयी है एवं प्रति एकड़ उपज में कमी हो गयी है और भारत में विशेषकर पिछले कुछ दशकों में कृषि उत्पादन पर्याप्त नहीं हो पाया है।

2035 तक कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता 0.80 हेक्टेअर प्रति व्यक्ति रह जाने की संभावना है। अतः बढ़ती हुई जनसंख्या की माँगों को पूरा करने के लिए यह आवश्यक है कि मृदा क्षरण को रोका जाए तथा बेकार बंजर, ऊसर, क्षारीय अम्लीय तथा निम्नीकृत मृदाओं को सुधारा जाए। मृदा वैज्ञानिकों के अनुसार देश की आधी से ज्यादा खेती योग्य जमीन किसी न किसी समस्या से ग्रस्त है। यह अनुमान नागपुर में स्थित राष्ट्रीय भूमि उपयोग और नियोजन ब्यूरो ने लगाया है।

तेजी से पैदावार बढ़ाने के चक्कर में भूमि से जितना पोषक तत्व लिया गया है, उतना वापस नहीं लौटाया गया है। यही वजह है कि आज हमारे देश के खेत की मिट्टी में करीब 5 लाख टन सल्फर की कमी है, जो 2025 तक 20 लाख टन हो जाएगी। उस समय मिट्टी को पर्याप्त उपजाऊ कहलाने के लिए 324 हजार टन जिंक, 30 हजार टन लोहा, 11 हजार टन ताँबा, 22 हजार टन मैंगनीज और 4 हजार बोरोन की जरूरत होगी। जैव उर्वरक, कम्पोस्ट गोबर की खाद तथा फसलों के क्रम के सही चुनाव कुछ ऐसे तरीके हैं, जिनसे रासायनिक उर्वरकों की मात्रा को नियंत्रित किया जा सकता है।

एक अनुमान के अनुसार 2035 तक कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता 0.80 हेक्टेअर प्रति व्यक्ति रह जाने की संभावना है। अतः बढ़ती हुई जनसंख्या की माँगों को पूरा करने के लिए यह आवश्यक है कि मृदा क्षरण को रोका जाए तथा बेकार बंजर, ऊसर, क्षारीय अम्लीय तथा निम्नीकृत मृदाओं को सुधारा जाए। मृदा वैज्ञानिकों के अनुसार देश की आधी से ज्यादा खेती योग्य जमीन किसी न किसी समस्या से ग्रस्त है। यह अनुमान नागपुर में स्थित राष्ट्रीय भूमि उपयोग और नियोजन ब्यूरो ने लगाया है। इस केन्द्र में उपग्रह चित्रों की मदद से भारत के सभी राज्यों की मिट्टियों के नक्शे बनाए गए हैं। अनुमान है कि देश की कोई 013 करोड़ हेक्टेअर जमीन बंजर हो चुकी है। इन जमीनों को उपजाऊ बनाकर खेती लायक बनाने की तकनीकें मौजूद हैं, पर मुश्किल से 40 लाख हेक्टेअर जमीन ही सुधारी गई हैं।

मृदा उर्वरता, मुख्य और गौण आवश्यक-पोषक तत्वों की पृष्ठ मृदा के अन्तर्गत पर्याप्त मात्रा और सुलभ रूप में उपस्थिति का परिणाम होती है। इसके अलावा मृदा में जैव पदार्थों का भी बड़ा महत्व है, इससे मृदा को भौतिक और सूक्ष्म जैविक लाभ मिलते हैं, क्योंकि जैव पदार्थ की पर्याप्त मात्रा मृदा को एक जीवित या सक्रिय पिंड बनाये रखती है। इस लिये इन मृदा उर्वरता तत्वों की मृदा में मौजूदा स्थिति क्या है, ये मृदा में कैसे घटते बढ़ते हैं और इनको किन रूपों और स्तरों पर किन साधनों से अनुरक्षित किया जाता है जिससे इनके

दीर्घकालीन उपयोग से फसलोत्पादन अधिक हो सके, मृदा उर्वरता से संबंधित किसी भी चर्चा से पूर्व इन सभी पक्षों पर विचार करना आवश्यक होगा और इन सब पक्षों की सामान्य जानकारी से यह बुनियादी जानकारी हो जायेगी कि व्यावहारिक रूप से मृदा उर्वरता का अनुरक्षण कैसे किया जाये या जहाँ इसकी क्षति हुयी है वहाँ इसको कैसे बढ़ाया जाये। इस समस्याओं पर विशेष रूप से भारतीय दशाओं और स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाना है।

मृदा जीवन का मूल आधार है, इससे लोगों को भोजन, वस्त्र और आश्रय तथा पशुओं के लिए चारा प्राप्त होता है। मानव को सारे खाद्य पदार्थ-सब्जियाँ, अनाज, दूध, अंडा, माँस या फल आदि, पहनने के लिये ऊनी सूती और रेशमी वस्त्र तथा पशुओं को खिलाने के लिए सभी प्रकार के चारे मृदा द्वारा दी गयी उर्वरता से प्राप्त होते हैं। इस प्रकार मृदा उर्वरता सम्पूर्ण मानव अस्तित्व का आधार है। वस्तुतः मृदा उर्वरता पृथ्वी के संपूर्ण प्राणियों का और पूरे विश्व की सभ्यता का आधार है। गाँव और नगरों के रहने वाले लोग अर्थात् सम्पूर्ण राष्ट्रजन अपनी मृदा और उसकी उर्वरता के साझीदार होते हैं। मृदा की उर्वरता को उच्चस्तर पर एवं उत्पादक बनाये रखना आवश्यक है। अन्यथा जीवन का आधार समाप्त हो जायेगा और हमारी सभ्यता नष्ट हो जाएगी। अनुर्वर भूमियों पर रहने वाले लोग प्रायः अस्वस्थ और अभावग्रस्त होते हैं, जबकि उर्वर और उपजाऊ भूमियों पर रहने वाले लोग प्रायः स्वस्थ और समृद्ध होते हैं। इस तरह मानव जाति का निर्माण भूमि से ही हुआ है। मानव का जितना विकास हुआ है, वह उसकी भूमि की उर्वरता और उत्पादकता बनाये रखने के प्रयासों पर निर्भर करता है। मानव की हर विशिष्ट जाति का उद्भव किसी न किसी विशिष्ट मृदा पर ही हुआ है। फसलोत्पादन के प्रमुख माध्यम के रूप में मृदा मानव जाति के कल्याण की बुनियाद है। किसी देश की कृषि सम्बन्धी जटिल समस्याओं के अध्ययन में निःसन्देह मृदा उर्वरता के अध्ययन का सबसे अधिक महत्व है।

मृदा उर्वरता से हमारा आशय मृदा की उस क्षमता से है, जिससे आर्थिक महत्व की फसलों का उत्पादन होता है। मृदा उर्वरता को मृदा उत्पादकता नहीं समझना चाहिए। मृदा उर्वरता मृदा की वह क्षमता है, जिससे फसलों की एक निश्चित पैदावार होती है और मृदा की उक्त क्षमता मृदा में निहित उन कारकों पर निर्भर करती है जो उसकी फसलोत्पादन क्षमता का निर्धारण करते हैं।

मृदा उर्वरता से हमारा आशय मृदा की उस क्षमता से है, जिससे आर्थिक महत्व की फसलों का उत्पादन होता है। मृदा उर्वरता को मृदा उत्पादकता नहीं समझना चाहिए। मृदा उर्वरता मृदा की वह क्षमता है, जिससे फसलों की एक निश्चित पैदावार होती है और मृदा की उक्त क्षमता मृदा में निहित उन कारकों पर निर्भर करती है जो उसकी फसलोत्पादन क्षमता का निर्धारण करते हैं। ये कारक हैं- मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों का संतुलित और सुलभ रूप में मौजूद रहना, पोषक तत्वों की निर्मुक्ति के लिये स्वस्थ वातावरण निर्माण हेतु मृदा का उचित सूक्ष्म जैविक स्तर बनाये रखना तथा मृदा की किसी विषैली या हानिकारक दशा या तत्वों से मुक्ति। इस प्रकार यह आवश्यक नहीं है कि कोई उर्वर मृदा उत्पादक भी हो, जैसे कोई जलाक्रान्ति या जलमग्न मृदा अधिक उपजाऊ होते हुए भी प्राकृतिक स्थिति प्रतिकूल रहने के कारण, अधिक उपज नहीं दे सकती है। इसी प्रकार उर्वर मृदा में लवण, क्षार या बोरोन लवण अधिक हो सकते हैं जो पादप वृद्धि के लिये विषैले होते हैं और मृदा की फसलोत्पादन क्षमता को सीमित करते हैं। इसके विपरीत किसी कम उर्वर रेतीली मृदा में आवश्यक मात्रा में उर्वरक और सिंचाई की व्यवस्था करके अधिक उपज ली जा सकती है। मृदा की फसलोत्पादन की उच्च क्षमता कुछ क्षेत्रों में किसी हानिकारक या विषैले तत्वों की अधिक मात्रा में उपस्थिति से घट सकती है। इन कारणों के अलावा कुछ ऐसे कारक भी हैं, जो एक प्रकार की दशाओं के अंतर्गत बहुत कुछ स्थिर अवस्था में रहते हैं, इन कारकों को मानव प्रयास द्वारा भी नहीं बदला जा सकता है। जहाँ इस प्रकार की मृदा विद्यमान है वहाँ उसके कारण मृदा प्रकार, प्रकृति और जलवायु है। मानव द्वारा नियंत्रित न किये जा सकने वाले मृदा कारकों में स्थलाकृति, मृदा गठन और मृदा परिच्छेदिका की गहराई आदि उल्लेखनीय है। इसी तरह तापमान, प्रकाश, तीव्रता, वाष्पन, पाला आदि जलवायु कारकों को भी मानवीय प्रयत्नों द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। स्पष्टतया मृदा उर्वरता के अध्ययन में वही कारक महत्व के हैं जिनको मानवीय प्रयासों द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है और किसी विशिष्ट जलवायु दशा के अंतर्गत पायी जाने वाली किसी प्रदत्त मृदा में इन कारकों का उपयुक्त और अनुकूल नियन्त्रण फसलोत्पादन में अधिकतम उपज का निर्धारण करता है। मृदा में विद्यमान उर्वरता का सबसे अधिक लाभ उठाने के लिये इन कारकों का यथोचित अनुकूलन करने पर ही उत्तम मृदा प्रबंध की सफलता निर्भर करती है। संक्षेप में मृदा उर्वरता किसी मृदा की ऐसी संभावित क्षमता है, जिससे फसलोत्पादन होता है, जबकि मृदा उत्पादकता-मृदा प्रबंध को प्रभावित करने वाले कई कारणों का सामूहिक परिणाम होता है।

किसी राष्ट्र की मृदा उर्वरता ही उस राष्ट्र की सबसे बहुमूल्य सम्पत्ति है, जिस भूमि में उर्वरता का स्तर ऊँचा हो वहाँ इसका अनुरक्षण किया जाना चाहिए, जहाँ मृदा उर्वरता कम हो वहाँ इसे बढ़ाया जाना चाहिए। मृदा उर्वरता दो प्रकार की होती है : स्थायी उर्वरता मृदा में स्वयं अंतर्निहित होती है और लगभग जन्मजात होती है जबकि अस्थायी उर्वरता उपयुक्त मृदा प्रबंध से उत्थान की जाती है, लेकिन मृदा में निहित स्थायी उर्वरता की मात्रा पर ही निर्भर करते हैं फिर भी हम यह जानते हैं कि स्थायी उर्वरता को मृदा प्रबन्ध की विधियों से बढ़ाया, बनाया या नष्ट किया जा सकता है, इस प्रकार मृदा के स्थायी उर्वरता स्तर की जानकारी और अस्थायी उर्वरता स्तर को अनुकूल बनाने के उपायों का ज्ञान ही उत्तम मृदा प्रबन्ध के लिये आवश्यक मूलभूत प्रौद्योगिकी है।

किसी राष्ट्र की मृदा उर्वरता ही उस राष्ट्र की सबसे बहुमूल्य सम्पत्ति है, जिस भूमि में उर्वरता का स्तर ऊँचा हो वहाँ इसका अनुरक्षण किया जाना चाहिए, जहाँ मृदा उर्वरता कम हो वहाँ इसे बढ़ाया जाना चाहिए। मृदा उर्वरता दो प्रकार की होती है : स्थायी उर्वरता मृदा में स्वयं अंतर्निहित होती है और लगभग जन्मजात होती है जबकि अस्थायी उर्वरता उपयुक्त मृदा प्रबंध से उत्थान की जाती है, लेकिन मृदा में निहित स्थायी उर्वरता की मात्रा पर ही निर्भर करते हैं।

मृदा उर्वरता, मुख्य और गौण आवश्यक-पोषक तत्वों की पृष्ठ मृदा के अन्तर्गत पर्याप्त मात्रा और सुलभ रूप में उपस्थिति का परिणाम होती है। इसके अलावा मृदा में जैव पदार्थों का भी बड़ा महत्व है, इससे मृदा को भौतिक और सूक्ष्म जैविक लाभ मिलते हैं, क्योंकि जैव पदार्थ की पर्याप्त मात्रा मृदा को एक जीवित या सक्रिय पिंड बनाये रखती है। इस लिये इन मृदा उर्वरता तत्वों की मृदा में मौजूदा स्थिति कया है, ये मृदा में कैसे घटते बढ़ते हैं और इनको किन रूपों और स्तरों पर किन साधनों से अनुरक्षित किया जाता है जिससे इनके दीर्घकालीन उपयोग से फसलोत्पादन अधिक हो सके, मृदा उर्वरता से संबंधित किसी भी चर्चा से पूर्व इन सभी पक्षों पर विचार करना आवश्यक होगा और इन सब पक्षों की सामान्य जानकारी से यह बुनियादी जानकारी हो जायेगी कि व्यावहारिक रूप से मृदा उर्वरता का अनुरक्षण कैसे किया जाये या जहाँ इसकी क्षति हुयी है वहाँ इसको कैसे बढ़ाया जाये। इस समस्याओं पर विशेष रूप से भारतीय दशाओं और स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाना है।

मृदा जीवन का मूल आधार है, इससे लोगों को भोजन, वस्त्र और आश्रय तथा पशुओं के लिए चारा प्राप्त होता है। मानव को सारे खाद्य पदार्थ-सब्जियाँ, अनाज, दूध, अंडा, माँस या फल आदि, पहनने के लिये ऊनी सूती और रेशमी वस्त्र तथा पशुओं को खिलाने के लिए सभी प्रकार के चारे मृदा द्वारा दी गयी उर्वरता से प्राप्त होते हैं। इस प्रकार मृदा उर्वरता सम्पूर्ण मानव अस्तित्व का आधार है। वस्तुतः मृदा उर्वरता पृथ्वी के संपूर्ण प्राणियों का और पूरे विश्व की सभ्यता का आधार है। गाँव और नगरों के रहने वाले लोग अर्थात् सम्पूर्ण राष्ट्रजन अपनी मृदा और उसकी उर्वरता के साझीदार होते हैं। मृदा की उर्वरता को उच्चस्तर पर एवं उत्पादक बनाये रखना आवश्यक है। अन्यथा जीवन का आधार समाप्त हो जायेगा और हमारी सभ्यता नष्ट हो जाएगी। अनुर्वर भूमियों पर रहने वाले लोग प्रायः अस्वस्थ और अभावग्रस्त होते हैं, जबकि उर्वर और उपजाऊ भूमियों पर रहने वाले लोग प्रायः स्वस्थ और समृद्ध होते हैं। इस तरह मानव जाति का निर्माण भूमि से ही हुआ है। मानव का जितना विकास हुआ है, वह उसकी भूमि की उर्वरता और उत्पादकता बनाये रखने के प्रयासों पर निर्भर करता है। मानव की हर विशिष्ट जाति का उद्भव किसी न किसी विशिष्ट मृदा पर ही हुआ है। फसलोत्पादन के प्रमुख माध्यम के रूप में मृदा मानव जाति के कल्याण की बुनियाद है। किसी देश की कृषि सम्बन्धी जटिल समस्याओं के अध्ययन में निःसन्देह मृदा उर्वरता के अध्ययन का सबसे अधिक महत्व है।

किसी राष्ट्र की मृदा उर्वरता ही उस राष्ट्र की सबसे बहुमूल्य सम्पत्ति है, जिस भूमि में उर्वरता का स्तर ऊँचा हो वहाँ इसका अनुरक्षण किया जाना चाहिए, जहाँ मृदा उर्वरता कम हो वहाँ इसे बढ़ाया जाना चाहिए। मृदा उर्वरता दो प्रकार की होती है : स्थायी उर्वरता मृदा में स्वयं अंतर्निहित होती है और लगभग जन्मजात होती है जबकि अस्थायी उर्वरता उपयुक्त मृदा प्रबंध से उत्थान की जाती है, लेकिन मृदा में निहित स्थायी उर्वरता की मात्रा पर ही निर्भर करते हैं फिर भी हम यह जानते हैं कि स्थायी उर्वरता को मृदा प्रबन्ध की विधियों से बढ़ाया, बनाया या नष्ट किया जा सकता है, इस प्रकार मृदा के स्थायी उर्वरता स्तर की जानकारी और अस्थायी उर्वरता स्तर को अनुकूल बनाने के उपायों का ज्ञान ही उत्तम मृदा प्रबन्ध के लिये आवश्यक मूलभूत प्रौद्योगिकी है।

फसलों के उत्पादन-स्तर में आ रही गिरावट के तथा अन्य कृषिगत चुनौतियों में अप्रत्याशित वृद्धि के कारण टिकाऊ खेती की अवधारणा में प्रायः तीन लक्ष्य सम्मिलित किये जाते हैं। पर्यावरण स्वास्थ्य, आर्थिक लाभदेयता तथा सामाजिक समरसता। ये तीनों लक्ष्य तभी हासिल किये जा सकते हैं जब हम कृषि संसाधनों का प्रयोग तथा प्रबन्धन इस प्रकार करें जो हमारी वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करते

आज बाजारों में जैव उर्वरकों के संशोधित कल्चर जैसे दलहनी फसलों के लिए राइजोबियम, एजोटोबैक्टर एवं धान की फसलों के लिए नील–हरित शैवाल, एजोला–एनाबीना इत्यादि आसानी से उपलब्ध हैं जिनके प्रयोग से लगभग 20–60 कि. ग्रा. तक नाइट्रोजन की पूर्ति वायुमण्डल से हो जाती है। अधिक उपज देने वाली फसलों और संकरों के प्रचलन के बाद अधिक पैदावार लेने के लिए प्रतिस्पर्धा ऐसी बढ़ी कि हमारा ध्यान इस बात की ओर गया ही नहीं कि यह प्रणाली कब तक चल पायेगी।

हुए भावी पीढ़ी को बिना किसी व्यवधान के सतत प्राप्त होती रहें। भारतीय कृषि में काफी परिवर्तन आये हैं। हरित-क्रांति की सफलता नई तकनीकों, मशीनीकरण, रासायनिक उर्वरक तथा उन्नतशील बीजों की देन है जिनकी महत्वपूर्ण भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। आज हम फसल उत्पादन में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के योगदान से फसलों की पैदावार में महत्वपूर्ण वृद्धि के साथ खाद्य उत्पादन में आत्मनिर्भर हो पाये हैं। एक तरफ, इस प्रकार के परिवर्तनों से खेती में अनेक कृषिगत जोखिमों में कमी तथा सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर धनात्मक प्रभाव पड़ा है वहीं दूसरी ओर प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण एवं अनैतिक दोहन, खाद्यान्न उत्पादन में अत्यधिक उर्वरक एवं पीड़कनाशी रासायनिकों के उपयोग से प्राकृतिक असंतुलन तथा कृषि पारिस्थितिक-तन्त्र में परिवर्तन आया है।

फसल सुरक्षा हेतु भारी मात्रा में कीट, रोग एवं खरपतवार नाशकों के उपयोग से कृषि उत्पादों, खाद्य पदार्थों, सब्जियों, दुग्ध एवं पेयजल में विषैले रसायनों की मात्रा सहनीय सीमा से कई गुना बढ़ी है। कृषि पारिस्थितिक-तन्त्र में भौतिक, जैविक सस्य परिवर्तनों के कारण तरह-तरह के कीड़ों तथा बीमारियों के प्रकोप में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। मृदा की बिगड़ती हालत, जल उपलब्धता में कमी, खाद्य-उत्पादों की गिरती गुणवत्ता, पर्यावरणीय प्रदूषण एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्यायें तथा पारिस्थितिकी घटकों में क्षरण इत्यादि के कारण कृषिगत चुनौतियों में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है।

परंपरागत कृषि के साथ साथ हमें उच्च तकनीक की सहायता से कृषि से प्राप्त होने वाले उत्पादन को बढ़ाने के प्रयास करने की आवश्यकता है क्योंकि हमारे पास भूमि का क्षेत्रफल निरंतर घट रहा है तथा जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है। ऐसे में बढ़ते मुँह और घटते भोजन की खाई को पाटना आसान काम नहीं है। इसके लिए हमें नियोजित विकास के रूप में टिकाऊ खेती करने की आवश्यकता है। टिकाऊ खेती का आशय है- आधारभूत पारिस्थितिक प्रणालियों की जीवन धारण क्षमता की सीमा में रहते हुए व्यवहार्य कृषि अपनाना। इसमें खेती-बाड़ी, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, केंचुआ पालन इत्यादि इस तरह से किए जाते हैं कि विकास तो हो पर विनाश न हो। टिकाऊ खेती का तात्पर्य मुख्यतः खाद्य-उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार, प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरणीय पारिस्थितिकी घटकों का संरक्षण तथा खेती का स्तर टिकाऊ रखते हुए खाद्य-सुरक्षा का लक्ष्य हासिल करने से है जिसके अन्तर्गत जल संसाधनों का समुचित उपयोग एवं प्रबन्धन, मृदा उर्वरता का समुचित उपयोग एवं संरक्षण, फसल सुरक्षा एवं भारी धातुओं का जैविक समाधान, खाद्य पोषण सुरक्षा हेतु जैव विविधता का संरक्षण, फसल खेती प्रणाली तथा उत्पादों में विविधीकरण तथा ऊर्जा सुरक्षा एवं प्रदूषण में कमी हेतु वैकल्पिक ऊर्जा का प्रयोग इत्यादि का समावेश आवश्यक है। अनुसंधान रिपोर्टों व समाचारों में भूमि की जैविक कार्बन मात्रा में कमी, उर्वराशक्ति क्षीणता एवं उत्पादन में ठहराव होने की बातें आती रहती हैं जो स्पष्ट संकेत देते हैं कि हमें उत्पादन प्रणाली में स्थायित्व के साथ-साथ भूमि की उर्वराशक्ति को बढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास किये जाने आवश्यक हैं। इसके लिए भूमि में जैविक कार्बन मात्रा की वृद्धि के लिए आनुपातिक तथा संस्तुत मात्रा में उर्वरकों के साथ कार्बनिक खादों जैसे कम्पोस्ट, हरी खाद, वर्मी कम्पोस्टिंग के नवीनतम ज्ञान के साथ उपयोगी तकनीकी प्रसार व उसके प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करना होगा। आज बाजारों में जैव उर्वरकों के संशोधित कल्चर जैसे दलहनी फसलों के लिए राइजोबियम, एजोटोबैक्टर एवं धान की फसलों के लिए नील-हरित शैवाल, एजोला-एनाबीना इत्यादि आसानी से उपलब्ध हैं जिनके प्रयोग से लगभग 20-60 कि. ग्रा. तक नाइट्रोजन की पूर्ति वायुमण्डल से हो जाती है। अधिक उपज देने वाली फसलों और संकरों के प्रचलन के बाद अधिक पैदावार लेने के लिए प्रतिस्पर्धा ऐसी बढ़ी कि हमारा ध्यान इस बात की ओर गया ही नहीं कि यह प्रणाली कब तक चल पायेगी। इसी का नतीजा है कि ये सारी प्रणालियाँ जवाब दे चुकी हैं और उत्पादकता के स्तर को घटाने वाली नई-नई समस्याएं उभरने लगी हैं। इस तरह की कुछ समस्याएँ हैं- पोषक तत्वों की दक्षता में कमी, मिट्टी में अने पोषक तत्वों का असंतुलन, मिट्टी के भौतिक, रासायनिक गुणों में प्रतिकूल परिवर्तन, पानी का दुरूपयोग, मिट्टी और पानी का प्रदूषण और कीटव्याधिक रोगों व खरपतवारों की सांठगांठ। इन समस्याओं से निपटने के लिए जहाँ हम एक ओर फसलों की सघनता का ध्यान रख रहे हैं, वहीं देश के विभिन्न भागों के

लिए फलदार फसलों को शामिल करते हुए ऐसी फसल प्रणालियाँ विकसित करने लगे हैं जो हर हाल में टिकाऊ साबित हो। अधिक मूल्य वाली फसलों में चुने गये फसल-चक्रों में मुख्य रूप से सूरजमुखी, सोयाबीन, मूँगफली, सरसों और बासमती धान इत्यादि शामिल किए गये हैं। इसी तरह कृषि की उत्पादकता और टिकाऊपन को ध्यान में रखते हुए समेकित पोषक प्रबंध और समेकित कीट प्रबंध की तकनीकों का अधिकाधिक प्रचलन किया जा रहा है। पानी की बचत के लिए कृषि में प्लास्टिक के उपयोग द्वारा छिड़काव एवं रिसाव सिंचाई प्रणाली के उपयोग की संभावनाओं पर भी हम विशेष ध्यान दे रहे हैं।

पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखने के लिये एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन एक महत्वपूर्ण विकल्प बनकर सामने आया है। एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन में कीट नियन्त्रण की सभी विधियों को सम्मिलित रूप में उपयोग करके नाशीजीवों की संख्या को आर्थिक हानि स्तर के नीचे रखा जाता है। इसमें प्राकृतिक शत्रुओं (मित्र कीटों) को प्रयोग में लाया जाता है।

फसल सुरक्षा में रसायनों के असंतुलित प्रयोग से विषैले घातक रसायनों एवं भारी धातुओं जैसे- आर्सेनिक, कैडमियम, मरकरी, लेड, कॉपर तथा क्रोमियम की मात्रा में मानक सीमा से कई गुना अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। भारी धातुओं पर एकीकृत पर्यावरण परियोजना वर्ष 1991 व 1996 में प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार खाद्य-शृंखला में समाहित होकर इन विषैली धातुओं का सांद्रण मानव शरीर में बढ़ रहा है। इनके घातक प्रभावों के कारण कई प्रकार की बीमारियां पैदा हो रही हैं जिनका इलाज भी संभव नहीं है। इतना ही नहीं, मिट्टी में ये रसायन तथा उनके अवशेष कई वर्षों तक बने रहते हैं। जल के साथ बहकर ये घातक रसायन तालाबों, झीलों में जलीय-जीवों को भी प्रभावित करते हैं। यहां तक कि इन कीटनाशक रसायनों का प्रभाव मिट्टी से पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध कराने वाले सूक्ष्म जीवों व प्राकृतिक मित्र कीटों पर भी पड़ता है।

धातु प्रदूषण की प्रकृति तथा उनके स्रोत से धातुओं के पर्यावरण में पहुँचने के बाद उनका निस्तारण मशीनी अथवा रासायनिक विधियों से करना बड़ा जटिल तथा काफी खर्चीला होने के साथ पर्यावरण संगत नहीं है। पर्यावरण वैज्ञानिकों व वनस्पति-शास्त्रियों ने बहुत से ऐसे पौधों का विकास कर लिया है जो संदूषित क्षेत्रों से भारी धातुओं के साथ-साथ अन्य कार्बनिक तथा अकार्बनिक प्रदूषकों को अपने उतकों में 10 से 100 गुना तक संचयन की क्षमता रखते हैं। जैसे- स्थलीय पौधों में ब्रेसिका, जुंसिया, थेलेस्पी केरूयोसेन्स, कारमिनीप्सिस हैलरी, डयूनेलिला, सनफ्लावर एवं मैकेडेगिया, न्यूरोपिया तथा जलीय पौधों में हाइड्रिला वर्टीसिलेटा, पिस्टिया स्ट्रेटिओटस, वैलेसनेरिया स्पाइसरेलिस, ब्रेसिका मोनेराई, पोटेमोजोटोन क्रिस्पस निलम्बो न्यूसिपेया इत्यादि प्रमुख हैं। इनका प्रयोग पानी, मिट्टी व वायु से संदूषणकारी तत्वों की सफाई एवं प्रदूषण नियन्त्रण के लिए पर्यावरण संगत व अति महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में वरदान सिद्ध हो सकता है।

पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखने के लिये एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन एक महत्वपूर्ण विकल्प बनकर सामने आया है। एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन में कीट नियन्त्रण की सभी विधियों को सम्मिलित रूप में उपयोग करके नाशीजीवों की संख्या को आर्थिक हानि स्तर के नीचे रखा जाता है। इसमें प्राकृतिक शत्रुओं (मित्र कीटों) को प्रयोग में लाया जाता है। इनमें से अधिकाधिक कीटों, फफूँदों, जीवाणुओं, विषाणुओं तथा वनस्पतियों पर आधारित उत्पाद है जो भूमि व जल के साथ व्यवस्थित होकर जैविक क्रिया का अंग बन जाते हैं। इसमें ट्राईकोग्रामा अण्ड-परजीवी ट्राईकोकार्ड, न्यूक्लियर पाली हाइड्रोसिस वायरस सुण्डी-परजीवी तरल वायरस कण, वैसिलस थुरेजिंएसिस बैक्टीरिया जनित कीटनाशक तरल व पाउडर, ट्राईकोडरमा बिरिडी फंफूद जनित रोग परजीवी, व्यूवेरिया वैसियाना इत्यादि को प्रयोग में लाया जाता है। यह कम खर्च वाली आर्थिक रूप से युक्तिसंगत ढंग से फसल सुरक्षा प्रणाली है। इनका प्रयोग पर्यावरण, मानव तथा पशुओं के लिये काफी सुरक्षित है क्योंकि ये मिट्टी के साथ मिलकर 20-30 दिन में पूर्णतः अपघटित हो जाते हैं।

कृषि को ''विज्ञान पर आधारित उद्योग'' मानकर चलने की आवश्यकता है। कृषि को भी वे सभी सहायता मिलनी चाहिए जो उद्योगों को मिलते हैं। तभी कृषि का सर्वांगीण विकास संभव है। विकसित देशों की भांति एक ही स्थान पर सभी निवेशों की उपलब्धि के साथ वैज्ञानिकों सलाहों पर आधारित कृषि के दिन अब निकट हैं। मानव स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के लिए ''नर्सिंग होम'' की भांति कृषि क्लीनिक ''कृषि निवेश केन्द्र'', ''कृषि व्यापार केन्द्र'' तथा ''फूड पार्क'' जैसे प्रतिष्ठानों का प्रचलन अब दूर नहीं है। यह प्रणाली कम भूमि वाले लघु तथा सीमांत कृषकों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी। कृषि के बुनियादी साधन के रूप में भूमि का महत्व सभी को विदित है। भूमि के सही उपयोग के लिए एक राष्ट्रीय नीति बनाने की आवश्यकता है। भूमि का अकृष्य उपयोग, बंजर-परती भूमि के सही विकास, भूमि एवं जल संसाधनों के दोहन आदि से संबंधित कोई नीति नहीं है। यह मानवता के लिए भावी संकट उत्पन्न कर सकता है। विकसित देशों में भूमि संरक्षण सम्बन्धी कानून बने हैं और उनका भलीभांति अनुपालन किया जाता है। हमारे यहाँ इस तरह के कोई कानून/नीति नहीं है। हमें भी विकसित देशों की भांति मृदा संरक्षण संबंधी कानून/नीति बनाकर उनका अनुपालन सुनिश्चित कराने की आवश्यकता है।

dineshmanidsc@gmail.com
❑❑❑

कैशलेस टेक्नॉलॉजी

रविशंकर श्रीवास्तव

शताब्दी के प्रारंभ में चार्ज–क्वाइन का प्रयोग प्रारंभ हुआ। ये चार्ज–क्वाइन आमतौर पर धातुओं के बने होते थे और केवल परिचित और नियमित ग्राहकों को दिए जाते थे जिनका खाता व्यापारिक संस्थानों में होता था। इस तरह इन चार्ज क्वाइन को दिखाकर लेन–देन को खाते में दर्ज कर लिया जाता था। सन 1920 के आते–आते चार्ज क्वाइन का रुपरंग बदल गया और चार्ज–प्लेट और चार्ज कार्ड का उपयोग होने लगा।

कल्पना कीजिए कि आप बाहर यात्रा के लिए निकले हैं, ट्रेन पकड़नी है, और समयाभाव व ट्रैफिक जाम की वजह से थोड़ी जल्दी में भी हैं। अचानक आपको याद आता है कि आप अपना टूथब्रश और टूथपेस्ट रखना भूल गए हैं। कोई बात नहीं, आप इसे रास्ते चलते परचून की दुकान से खरीदने के लिए रुक जाते हैं। दुकान वाला पहले ही किसी अन्य खरीदार से जूझ रहा होता है। उसे निपटाकर वह आपसे मुखातिब होता है। आप जल्दी में हैं, आपके ट्रेन छूट जाने का समय हो रहा है, मगर दुकानदार को आपकी यह अर्जेंसी पता नहीं है, वो अपने हिसाब से आपको सामान देता है। फिर आप खरीदी हुई वस्तु का भुगतान करते हैं तो एक और समस्या आती है। आपके पास केवल बड़े नोट हैं और दुकानदार के पास आपको देने को पर्याप्त छुट्टे नहीं हैं। इस आपाधापी में आपकी ट्रेन छूट जाती है।

अब अपनी इस कल्पना में थोड़ा सा ट्विस्ट कीजिए। आप जिस दुकान पर टूथपेस्ट लेने जा रहे हैं, वहाँ आरएफआईडी सेंसर युक्त कॉन्टैक्टलेस पेमेंट की सुविधा है और आपने भी कॉन्टैक्टलैस पेमेंट वाला आरएफआईडी टैग युक्तरिस्टबैंड पहना हुआ है। आप दुकान में घुसते हैं, टूथपेस्ट, टूथब्रश उस दुकान के काउंटर से उठाते हैं, और बस वहाँ से बाहर आ जाते हैं। आपके दुकान में घुसते ही वहाँ का आरएफआईडी सेंसर आपको पहचान लेता है और दुकान पर स्थित विभिन्न सेंसर सक्रिय हो जाते हैं और जो जो सामान आप उठाते हैं उनकी कीमत जोड़ते जाते हैं। जैसे ही आप दुकान से बाहर आते हैं, आपके खाते में स्वचालित बिलिंग हो जाती है और स्वचालित भुगतान हो जाता है जिसकी सूचना आपको आपके मोबाइल पर एसएमएस और ईमेल के जरिए मिल जाती है। दुकान के गेट पर बैठे दुकानदार या चौकीदार के पास ग्रीन सिग्नल आता है कि भुगतान हो चुका है। वो आपका अभिनंदन करता है और आप इस तर तुरंत ही खुशी-खुशी इंस्टैंट भुगतान कर निकल लेते हैं। और आपकी ट्रेन आपको आराम से मिल जाती है। ऊपर से, न चिल्लर का चक्कर और न ढेर सारे रुपए लेकर साथ चलने की जरूरत।

कैशलेस भुगतान की यही सबसे बड़ी खूबी है। आप अपने साथ अपना बैंक लेकर चल सकते हैं, हर किस्म का चिल्लर और कितनी ही बड़ी राशि चाहे वह लाखों में हो

-अपने जेब में साथ लेकर-एक प्लास्टिक कार्ड-डेबिट या क्रेडिट कार्ड-में या अपने मोबाइल वालेट के रूप में साथ लेकर चल सकते हैं, और उसका उपयोग चौबीसों घंटे कभी भी, कहीं भी कर सकते हैं। वह भी पूरी तरह सुरक्षित।

आइए, अब जानते हैं कि कैशलेस भुगतान प्रणाली के पीछे का विज्ञान क्या है क्या क्या विकल्प हैं और यह काम कैसे करता है। परंतु पहले इसका इतिहास जानें -

कैशलेस भुगतान प्रणाली का इतिहास मानवीय सभ्यता जितना पुराना है जिसमें बार्टर यानी वस्तु-विनिमय का उपयोग किया जाता था। उधारी प्रथा भी एक तरह का कैशलेस तंत्र है जिसमें महीने के अंत में या एक नियमित अंतराल पर वास्तविक रकम का लेन-देन किया जाता है, बाकी समय लेन-देन को एक रजिस्टर या बही में दर्ज कर लिया जाता है। परंतु आधुनिक कैशलेस भुगतान प्रणाली जिसमें क्रेडिट डैबिट कार्डों अथवा ई-वालेट जैसी टेक्नॉलॉजी का उपयोग होता है, वह जटिल कम्प्यूटिंग और इंटरनेट प्रणाली का सुरक्षित प्रयोग कर बनाया गया है।

लेन-देन के लिए रुपए-पैसे के बदले क्रेडिट कार्ड का उपयोग करने की संकल्पना और इस शब्द का उपयोग उपन्यासकार एडवर्ड बेलामी ने अपने उपन्यास लुकिंग बैकवर्ड में सन 1887 में किया। तब इसे कोरी कल्पना ही कहा जा सकता था। मगर जल्द ही, विभिन्न व्यापारिक संस्थानों जिनमें होटल, डिपार्टमेंटल स्टोर और पेट्रोल पम्प आदि शामिल थे, अपने परिचित व बारम्बार आने वाले ग्राहकों की सुविधा के लिए कुछ उपाय गढ़ने प्रारंभ किए। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में चार्ज-क्वाइन का प्रयोग प्रारंभ हुआ। ये चार्ज-क्वाइन आमतौर पर धातुओं के बने होते थे और केवल परिचित और नियमित ग्राहकों को दिए जाते थे जिनका खाता व्यापारिक संस्थानों में होता था। इस तरह इन चार्ज क्वाइन को दिखाकर लेन-देन को खाते में दर्ज कर लिया जाता था। सन 1920 के आते-आते चार्ज क्वाइन का रुपरंग बदल गया और चार्ज-प्लेट और चार्ज कार्ड का उपयोग होने लगा। वेस्टर्न यूनियन ने अपने नियमित ग्राहकों के लिए चार्ज कार्ड पेश किया और दस साल के भीतर ही ये कार्ड इतने लोकप्रिय हुए कि अन्य व्यापारिक संस्थानों ने एक दूसरे के कार्ड भी स्वीकार करना प्रारंभ कर दिए। चूंकि उस जमाने में इंटरनेट या इलेक्ट्रॉनिकी जैसी कोई सुविधा नहीं थी, अतः उन कार्डों में एम्बोज कर या कार्ड के पीछे चिपकी कागज की शीट पर मशीन से छपाई कर लेन-देन का विवरण दर्ज किया जाता था और महीने के अंत में कार्ड पर देय रकम का भुगतान किया जाता था।

तब की उपलब्ध ये सारी सुविधाएँ, तब की उपलब्ध वैज्ञानिकी, प्रौद्योगिकी पर निर्भर थीं, और इसी वजह से बेहद सीमित मात्रा में ही प्रचलित थीं। आमतौर पर क्षेत्र विशेष में ही। इनके इस्तेमाल में तमाम झंझटें भी थीं। फिर, सितंबर 1958 में बैंक ऑफ अमरीका ने एक बड़ा दांव खेला। बैंक ऑफ अमेरिका ने फ्रेस्नो शहर के सभी 60 हजार योग्य निवासियों को बैंक अमरीकी कार्ड नामक क्रेडिट कार्ड मुफ़्त में भेज दिया और इसका उपयोग शहर के तमाम व्यापारिक संस्थानों में करने का अनुरोध किया। शहर के तमाम व्यापारिक संस्थानों से भी इस कार्ड को स्वीकार करने का अनुरोध किया। यह परीक्षण चल निकला और इस कार्ड की मांग तो बढ़ी ही, नए प्रकल्पों के गठन का रास्ता भी खुला। 1966 में मास्टरकार्ड का जन्म हुआ और 1976 में बैंक अमरीकी कार्ड का नाम बदल कर वीजा कार्ड हो गया। दुनियाभर के देशों में यही दो कार्ड अधिक लोकप्रिय हैं। परंतु तब इन कार्डों का प्रयोग, कैशलेस की सुविधा देते होते हुए भी उपयोगकर्ताओं के लिए झंझट भरा होता था, बावजूद इसे ये कार्ड लोकप्रिय होते रहे।

आप पूछेंगे कि कैसे? तब जब आप अपना क्रेडिट कार्ड कहीं प्रयोग में लेते थे तो व्यापारिक संस्थान पहले आपके कार्ड के बैंक में फोन लगाते थे और फिर आपके कार्ड के

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में चार्ज-क्वाइनका प्रयोग प्रारंभ हुआ। ये चार्ज-क्वाइन आमतौर पर धातुओं के बने होते थे और केवल परिचित और नियमित ग्राहकों को दिए जाते थे जिनका खाता व्यापारिक संस्थानों में होता था। इस तरह इन चार्ज क्वाइन को दिखाकर लेन-देन को खाते में दर्ज कर लिया जाता था। सन् 1920 के आते-आते चार्ज क्वाइन का रुपरंग बदल गया और चार्ज-प्लेट और चार्ज कार्ड का उपयोग होने लगा। वेस्टर्न यूनियन ने अपने नियमित ग्राहकों के लिए चार्ज कार्ड पेश किया और दस साल के भीतर ही ये कार्ड इतने लोकप्रिय हुए कि अन्य व्यापारिक संस्थानों ने एक दूसरे के कार्ड भी स्वीकार करना प्रारंभ कर दिए।

सही होने की व खाते में पर्याप्त बैलेंस या लिमिट की पुष्टि करते थे। पुष्टि हो जाने के उपरांत ही वे आपके कार्ड के लेनदेन को स्वीकृत करते थे। कार्ड लेनदेन की स्वचालित सुविधा ग्राहकों को तब मिलने लगी जब 1973 के पश्चात बैंकों में बड़े स्तर पर कम्प्यूटरीकरण का दौर प्रारंभ हुआ और नेटवर्क के जरिए कम्प्यूटर पूरे समय एक दूसरे से जुड़े रहने लगे।

जब दुनिया को इंटरनेट की सुविधा मिली, तब कैशलेस भुगतान सुविधा को तो जैसे पंख लग गए। बैंकों के चौबीसों घंटे आपस में जुड़े रहने और उपलब्ध रहने की सुविधा ने न केवल नए-नए विकल्प प्रदान किए, ये क्रेडिट कार्ड इंटरनेट बैंकिंग सेवा से पूर्ण रूपेण जुड़ गए और इनके विविध रूप जैसे कि डेबिट कार्ड, प्रीपेड कार्ड, पेट्रो कार्ड आदि भी आ गए। इंटरनेट के माध्यम से ही लेनदेन का प्रकल्प पे-पल भी आ गया जिसके जरिए घर बैठे ही समुद्र पार लेनदेन किया जा सकता था। अब तो एनएफ़सी और आरएफआईडी टैग जैसे सिस्टम आ चुके हैं जिनके जरिए बिना किसी कार्ड स्वाइप के, मात्र अपनी उपस्थिति से भुगतान कर सकते हैं। यही नहीं, इंटरनेट की अपनी, आभासी मुद्रा बिटक्वाइन भी आ गई जिसे लोगों ने हाथों हाथ लिया।

इस तरह, कैशलेस लेनदेन को देखें तो यह इंटरनेट के साथ ही पला-बढ़ा। हालांकि विभिन्न देशों में इस विधि की स्वीकार्यता विभिन्न कारणों से, इंटरनेट की स्वीकार्यता से बिलकुल भिन्न किस्म की रही है। फिर भी, जिन देशों में इंटरनेट को समग्र रूप से उपयोग में लिया जाता रहा है, वहां कैशलेस भुगतान प्रणाली परिपूर्ण विकसित और स्वीकार्य हो चुकी है। कुछ उन्नत देशों में तो यह 90-95 प्रतिशत तक स्वीकार्य हो चुकी है और केवल 5-10 प्रतिशत लोग ही लेन-देन के लिए यदा कदा रुपए पैसे का उपयोग करते हैं। यूँ तो अब, कैशलेस लेन-देन पूरी तरह इंटरनेट पर निर्भर है। परंतु बहुत सी जगह मोबाइल फोन से एसएमएस के जरिए भी कैशलेस बैंकिंग की सुविधा हासिल हो रही है, मगर इनके बैक एंड में तगड़ा इंटरनेट सपोर्ट समाहित होता है।

अभी जब आप कोई कैशलेस लेनदेन करते हैं -उदाहरण के लिए, आपने किसी दुकान पर अपने डेबिट कार्ड से स्वाइप मशीन से भुगतान किया। आपने कार्ड स्वाइप किया, मशीन में अपना पिन डाला और भुगतान हो गया। इस पूरी प्रक्रिया में पीछे बेहद जटिल कार्य निष्पादित हुए हैं -जिन्हें सिलसिलेवार इस तरह समझा जा सकता है -जैसे ही आपने कार्ड स्वाइप किया, इसके मैग्नेटिकस्ट्रिप में मौजूद डेटा को पढ़कर वह स्वाइप मशीन आपके कार्ड को, आपके खाते को पहचान गया और एक सेंट्रल सर्वर पर डेटा को भेज दिया कि कार्ड के जरिए इतनी राशि का भुगतान करना है। सर्वर पर आपके खाते में मौजूद रकम या लिमिट की सत्यता को चेक किया जाता है और आपके पिन को वेलिडेट किया जाता है। यह सही होने पर पलक झपकते ही भुगतान हो जाता है। यह सारा संचार अति सुरक्षित एनक्रिप्टेड होता है। हालांकि हाल ही में कुछ रपट यह भी आई थी कि किसी खास कंपनी के पीओएस मशीनों में वायरस इंस्टाल कर उनके डेटा चुराए गए थे और कंपनियों और बैंकों को बड़ा चूना लगाया गया था।

आमतौर पर यह सवाल उठाया जाता रहा है कि इंटरनेट बैंकिंग जो कि वर्तमान के किसी भी किस्म के कैशलेस लेन-देन का बैक बोन है, असुरक्षित रहता है और हैकर्स इसमें सेंध मारते रहते हैं। तो मामला भले ही तू डाल-डाल-और मैं पात-पात जैसा रहता हो, आमतौर पर यदि थोड़ी सी सावधानी बरती जाए, तो आधुनिक कैशलेस लेन-देन पूरी तरह सुरक्षित रहता है। मैं स्वयं पिछले बीस साल से इंटरनेट बैंकिंग व डेबिट/क्रेडिट कार्डों का उपयोग कर रहा हूँ, यहाँ तक कि पुराने मोबाइल फ़ीचर फ़ोन में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के मोबाइल बैंकिंग का प्रयोग भी एसएमएस के जरिए करता रहा हूँ, जिसमें इंटरनेट की

आपने कार्ड स्वाइप किया, मशीन में अपना पिन डाला और भुगतान हो गया। इस पूरी प्रक्रिया में पीछे बेहद जटिल कार्य निष्पादित हुए हैं -जिन्हें सिलसिलेवार इस तरह समझा जा सकता है -जैसे ही आपने कार्ड स्वाइप किया, इसके मैग्नेटिकस्ट्रिप् में मौजूद डेटा को पढ़कर वह स्वाइप मशीन आपके कार्ड को, आपके खाते को पहचान गया, और एक सेंट्रल सर्वर पर डेटा को भेज दिया कि कार्ड के जरिए इतनी राशि का भुगतान करना है। सर्वर पर आपके खाते में मौजूद रकम या लिमिट की सत्यता को चेक किया जाता है और आपके पिन को वेलिडेट किया जाता है। यह सही होने पर पलक झपकते ही भुगतान हो जाता है। यह सारा संचार अति सुरक्षित एनक्रिप्टेड होता है।

जरूरत नहीं होती है, आज तक मुझे किसी किस्म की कोई परेशानी नहीं हुई और न ही मेरा एक पैसा किसी गलत या फर्जी ट्रांजैक्शन में फंसा। एकाध बार एटीएम में कैश नहीं निकला और खाते में क्रेडिट हो गया, मगर वह पैसा भी सप्ताह भर के भीतर वापस खाते में जमा हो गया। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि कैशलेस लेनदेन पूरी तरह सुरक्षित रहता है और केवल एक-दो प्रतिशत मामले में ही समस्या होती है।

वर्तमान में भारत में कैशलेस लेनदेन के लिए अति सुरक्षित पेमेंट ग्रेड एनक्रिप्शन टेक्नॉलॉजी का उपयोग किया जाता है जिससे कि उपयोगकर्ता व बैंक का डेटा सुरक्षित रहे। इसे खासतौर पर सरकार के नेशनल पेमेंट कार्पोरेशन ऑफ इंडिया के लिए बनाया गया है। मास्टर कार्ड और वीज़ा के कार्ड में भी उन्नत किस्म की एनक्रिप्शन टेक्नॉलॉजी का प्रयोग किया जाता है जिससे प्रयोग के दौरान हैकिंग आदि के जरिए उपयोगकर्ताओं या व्यापारिक संस्थानों को चूना लगाने वाली संभावना नहीं होती। आमतौर पर इन कार्डों के प्रयोग में सुरक्षा की समस्या कार्ड धारक के कार्ड गुमने, गलत हाथों में जाने अथवा कार्ड का प्रयोग जहाँ हुआ है वहाँ के सिस्टम में सेंध मारकर डेटा चुराने आदि से होती है। फिर भी, ऐसे गलत लेनदेन की रपट यदि तीन कार्य दिवस के भीतर दे दी जाए तो उपयोगकर्ता का पैसा आमतौर पर सुरक्षित होता है चूंकि कानूनन, ऐसे लेन-देन के लिए फिर सेवा-प्रदाता कंपनियाँ जिम्मेदार होती हैं। आज के दौर में कैशलेस लेनदेन के लिए बहुत सारे विकल्प हैं। क्रेडिट/डेबिट/प्रीपेड कार्ड में पहले मैग्नेटिकस्ट्रिप का प्रयोग होता था। जिसे पीओएस मशीन से स्वाइप कर लेनदेन सुनिश्चित किया जाता था। सुरक्षा बढ़ाने के लिहाज से उनमें चिप लग कर आने लगे। फिर उनमें सुविधा के लिहाज से एनएफसी टैग आने लगा जिससे भुगतान में और आसानी होने लगी - यानी बिना स्वाइप किए, कार्ड को मशीन में बिना लगाए, केवल टैप कर लेनदेन पूरा किया जाने लगा। इंटरनेट बैंकिंग व मोबाइल एप्प से बैंकिंग भले ही थोड़ा झंझट भरा हो सकता है, मगर यह एक अति सुरक्षित माध्यम कहा जा सकता है क्योंकि इसमें द्विस्तरीय और त्रिस्तरीय सुरक्षा जोड़ी जा सकती है। आपके रजिस्टर्ड मोबाइल पर प्रत्येक ट्रांजैक्शन के लिए पासवर्ड या पिन भेजा जाता है जिसे भर कर आपको अपना भुगतान वेलिडेट करना होता है। हाल ही में आरबीआई ने नया गाइडलाइन जारी किया है जिससे पंजीकरण के उपरांत उपयोगकर्ता और व्यापारिक संस्थान दो हजार रुपये से कम के लेनदेन पर हर बार पासवर्ड या पिन दर्ज करने के झंझट से मुक्ति पा सकेंगे और उनका केशलेस व्यवहार और आसान होगा। आजकल हर व्यक्ति के हाथ में एक अदद मोबाइल वह भी स्मार्टफ़ोन किस्म का दिख ही जाता है। फ्रीचार्ज और पेटीएम जैसे एप्प से आपका स्मार्टफ़ोन अब आपके बटुए का रूप धारण करने में पूरी तरह सक्षम हैं, और वह भी पूरी तरह सुरक्षित। आपका बटुआ यदि कोई चुरा ले तो उसमें रखा पूरा रुपया उस पॉकेटमार का हो जाता है, मगर यदि आपका मोबाइल बटुआ यानी मोबाइल फोन यदि कोई चुरा ले या गुम जाए, तो भी उसमें से आमतौर पर कोई कुछ चुरा नहीं सकता क्योंकि पासवर्ड और पिन तो आपको आपके मन में याद रहता है। ऊपर से, आज की उन्नत तकनीक में इंटरनेट के जरिए या किसी अन्य मोबाइल के जरिए तत्काल ही अपने मोबाइल फोन को लॉक कर सकते हैं व उसमें मौजूद डेटा को हटा सकते हैं।

यूँ भी आने वाला समय कैशलेस का होगा। कहीं भी जाइए, किसी भी देश में जाइए, किसी भी मुद्रा में लेनदेन करिए, कितनी ही छोटी बड़ी राशि का लेनदेन करिए, किसी भी समय लेनदेन करिए कहीं कोई समस्या नहीं। कैशलेस तंत्र की यही खूबी है। तो आइए, इसे अभी से क्यों न अपनाएँ? आइए, कैशलेस हो जाएँ!

raviratlami@gmail.com

❑❑❑

वर्तमान में भारत में कैशलेस लेनदेन के लिए अति सुरक्षित पेमेंट ग्रेड एनक्रिप्शन टेक्नॉलॉजी का उपयोग किया जाता है जिससे कि उपयोगकर्ता व बैंक का डेटा सुरक्षित रहे। इसे खासतौर पर सरकार के नेशनल पेमेंट कार्पोरेशन ऑफ इंडिया के लिए बनाया गया है। मास्टर कार्ड और वीज़ा के कार्ड में भी उन्नत किस्म की एनक्रिप्शन टेक्नॉलॉजी का प्रयोग किया जाता है जिससे प्रयोग के दौरान हैकिंग आदि के जरिए उपयोगकर्ताओं या व्यापारिक संस्थानों को चूना लगाने वाली संभावना नहीं होती।

करियर

वेल्डिंग प्रौद्योगिकी

संजय गोस्वामी

धातु के वेल्ड भागों के सूक्ष्म संरचना का अध्ययन करने के लिए धातु विज्ञान का ज्ञान काभी महत्वपूर्ण है। कम्प्यूटर का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है। क्योंकि आजकल आर्क वेल्डिंग रोबोट द्वारा भी वेल्डिंग का कार्य किया जाता है । इस क्षेत्र में इंस्ट्रुमेंटेशन, इलेक्ट्रॉनिक्स, मैकेनिक्स तथा कम्प्यूटर साइंस जैसे सहयोगी क्षेत्रों का ज्ञान शामिल होता है।

वेल्डिंग स्थायी रूप से दो धातु भागों को जोड़ने की एक तकनीक है। जिसमें 450 डिग्री से 1050 डिग्री सी.जी. तक की तापमान पर भारी गर्मी से धातु पिघल कर एक स्थायी बांड बनाता है वेल्डिंग में फिलर रॉड को फ्यूज कर धातु के टुकड़े को जोड़ने के लिए उपयोग किया जाता है। आज वेल्डिंग का कार्य ऑटोमोबाइल, निर्माण उद्योग, जहाज निर्माण, एयरोस्पेस अनुप्रयोगों, परमाणु ऊर्जा विभाग में और अन्य विनिर्माण उद्योग में बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। वेल्डिंग का काम पाइपलाइनों में, भवनों में, पुलों में, बिजली संयंत्रों और रिफाइनरियों में पाइप को जोड़ने के लिए और अन्य संरचनाओं के निर्माण में भी प्रयोग किया जाता है। वेल्डिंग प्रौद्योगिकी में वेल्डिंग और फिटिंग ड्राइंग, गणित, मैकेनिकल ड्राइंग, धातु विज्ञान, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, अविनाशी परिक्षण प्रौद्योगिकी और आदि के पाठ्यक्रम शामिल है वेल्डिंग प्रौद्योगिकी में धातु विज्ञान, इलेक्ट्रिकल, मैकेनिकल इंजीनियरिंग विषय मुख्य रूप से होते हैं। वेल्डिंग, वेल्डिंग तकनीक में वेल्डिंग से सिर्फ दो धातुओं को जोड़ना ही नहीं है, बल्कि इस प्रक्रिया में उसके आकार-प्रकार को संतुलित रखना सबसे बड़ी चुनौती होती है। अतः धातु के वेल्ड भागों के सूक्ष्म संरचना का अध्ययन करने के लिए धातु विज्ञान का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है। कम्प्यूटर का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है क्योंकि आजकल आर्क वेल्डिंग रोबोट द्वारा भी वेल्डिंग का कार्य किया जाता है। इस क्षेत्र में इंस्ट्रुमेंटेशन, इलेक्ट्रॉनिक्स, मैकेनिक्स तथा कम्प्यूटर साइंस जैसे सहयोगी क्षेत्रों का ज्ञान शामिल होता है। इसलिए इस क्षेत्र में करियर बनाने वालों को इन क्षेत्रों से संबंधित तकनीकों से अवगत होना महत्वपूर्ण है।

कई उपयोगी वस्तुओं के निर्माण में धातु खण्डों को आपस में जोड़ने की आवश्यकता रहती है। प्रारम्भ में कुछ धातुओं को फ्यूजन की स्थिति तक गर्म करके हथौड़े के प्रेशर से जोड़ा जाता था, जैसे- चेन कड़ा; आदि, परन्तु बाद में कई अन्य प्रक्रमों का आविष्कार हुआ। इसमें समस्त कार्यखण्ड को गर्म करने की आवश्यकता नहीं रहती। मात्र वेल्डिंग के स्थान पर फ्यूजन करके दोनों सतहों को जोड़ा जाता है। फ्यूजन के लिये ताप की आवश्यकता रहती है जिसे विभिन्न प्रकार के उपकरणों तथा प्रक्रमों से प्राप्त किया जता है। इन्हीं के आधार पर वेल्डिंग विधियों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

वेल्डिंग प्रक्रियाओं का वर्गीकरण

वेल्डिंग प्रक्रियाओं को निम्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है

- जोड़े जाने वाली धातुओं के आधार पर
- वेल्डिंग के लिये लगाये गये प्रेशर के आधार पर
- ताप के स्तरों के आधार पर
- अन्य वर्गीकरण मैटल के फ्यूजन के लिये आवश्यक ऊष्मा को विद्युत आर्क बनाकर जुटाया जाता है तो उसे आर्क वेल्डिंग कहा जाता है। वेल्डिंग आर्क बनाने की विधि के अनुसार इसे कई भागों में बाँटा गया है:-

• आर्क वेल्डिंग • कार्बन आर्क वेल्डिंग • टिग वेल्डिंग • आर्क स्पॉट वेल्डिंग आर्क स्टूड वेल्डिंग • एटोमिक हाइड्रोजन वेल्डिंग • इलेक्ट्रो गैस वेल्डिंग

प्लाज्मा आर्क वेल्डिंग जोड़े जाने वाली धातुओं पर जोड़े जाने वाली धातुओं पर वेल्डिंग प्रक्रियाओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है -

- ऑटोजीनियम वेल्डिंग
- हैट्रोजीनियम वेल्डिंग

ऑटोजीनियम वेल्डिंग : जब वेल्डिंग द्वारा समान धातु के दो भागों को उसके धातु की फिलर रॉड के द्वारा जोड़ा जाता है या बिना फिलर रॉड प्रयोग किये जोड़ा जाता है तो उसे ऑटोजीनियम वेल्डिंग कहते हैं- जैसे माइल्ड स्टील के पार्ट को माइल्ड स्टील द्वारा वेल्ड करना। इसके लिये फ्यूजन वेल्डिंग, फोर्ज वेल्डिंग आदि क्रियाएँ कही जाती है।

हैट्रोजीनियम वेल्डिंग - जब अलग-अलग धातु के भागों को फिलर रॉड की सहायता से अथवा बिना सहायता के जोड़ा जाता है तो उसे हैट्रोजीनियम वेल्डिंग कहते हैं। इसमें फिर मैटल की राड का गलनांक जोड़ने जाने वाले धातु पार्ट्स से कम रहता है। इसके द्वारा माइल्ड स्टील तथा कास्ट आयरन को अधिकता से जोड़ा जाता है। इसके लिये सॉलिड फेज वेल्डिंग क्रिया की जाती है प्रेशर के आधार पर वेल्डिंग दो प्रकार की होती है-

- प्रेशर या प्लास्टिक वेल्डिंग
- नॉन प्रेशर या फ्यूजन वेल्डिंग

प्रेशर या प्लास्टिक वेल्डिंग इस प्रक्रिया में वेल्डिंग करने वाली सतहों को प्लास्टिक स्टेज अर्थात् पिघलने की अवस्था तक गर्म करके, दोनों सतहों पर दबाव डालकर जोड़ देने से स्थायी जोड़ प्राप्त होता है। इसी प्रक्रिया को प्रेशर या प्लास्टिक वेल्गिड कहते हैं। इस प्रक्रिया में धातु का प्लास्टिक अवस्था तक गर्म होना आवश्यकता होता है। तत्पश्चात प्रेशर लगाने पर ही आवश्यक बॉण्ड बनता है। इस प्रक्रिया के द्वारा निम्न प्रक्रियाएँ की जाती हैं :

रजिस्टैंस वेल्डिंग फोर्ज वेल्डिंग नॉन-प्रेशर या फ्यूजन वेल्डिंग- इस वेल्डिंग प्रक्रिया में जोड़े जाने वाली सतहों को मिलाकर रखा जाता है तथा किसी ऊष्मा स्रोत के द्वारा सतहों को पिघलने तक गर्म किया जाता हैं। इस प्रकार पिघली धातु आपस में मिलकर एक समान मिश्रण बनाती है। आवश्यकतानुसार फिलर धातु भी इसमें मिलायी जाती है। इस मिश्रित धातु के ठण्डी होने पर एक पक्का जोड बनाती है। यह जोड़ धातुओं के पिघलने पर बिना प्रेशर लगाये ही बन जाता है इसलिए इसको फ्यूजन वेल्डिंग कहते हैं। इस विभाग में निम्न प्रक्रियाएँ आती है-

आर्क वेल्डिंग, इलेक्ट्रॉन बीम वेल्डिंग, इलेक्ट्रो स्लैग वेल्डिंग, लेजर वेल्डिंग, चुनौतीपूर्ण कार्यः वेल्डिंग अभियंता और वेल्डिंग निरीक्षक संयंत्र का चित्र के आधार पर विशिष्ट वेल्डर से उनके वेल्डिंग कार्य की योजना पूर्ण या आंशिक रूप से वेल्डिंग कर टैंक संयंत्र का निर्माण करते हैं पाइप से पाइप को जोड़ने और धातु प्लेट को जोड़ने के लिए वेल्डिंग के भागों का गुणवत्ता परीक्षण महत्वपूर्ण है। वेल्डिंग का विश्लेषण करने के लिए वेल्डिंग इंजीनियर अपने

जब वैल्डिंग द्वारा समान धातु के दो भागों को उसके धातु की फिलर रॉड के द्वारा जोड़ा जाता है या बिना फिलर रॉड प्रयोग किये जोड़ा जाता है तो उसे ऑटोजीनियम वैल्डिंग कहते हैं –जैसे माइल्ड स्टील के पार्ट को माइल्ड स्टील द्वारा वैल्ड करना। इसके लिये फ्यूजन वैल्डिंग, फोर्ज वैल्डिंग आदि क्रियाएँ कही जाती है।

हैट्रोजीनियम वैल्डिंग – जब अलग–अलग धातु के भागों को फिलर रॉड की सहायता से अथवा बिना सहायता के जोड़ा जाता है तो उसे हैट्रोजीनियम वैल्डिंग कहते हैं। इसमें फिर मैटल की राड का गलनांक जोड़ने जाने वाले धातु पार्ट्स से कम रहता है। इसके द्वारा माइल्ड स्टील तथा कास्ट आयरन को अधिकता से जोड़ा जाता है।

वेल्ड विसंगतियों की एक व्यापक रेंज का पता लगाने के लिए, चुंबकीय कण परीक्षण एक बेहतर विकल्प है। इस तकनीक के द्वारा वेल्ड दोषों में दरार, साथ ही सरंध्रता, तेजी, समावेशन और सरंध्रता संलयन का पता लगा सकते हैं। इस विधि में वेल्ड के भाग में एक चुंबकीय क्षेत्र की फ्लक्स के द्वारा गुजारा जाता है – एक चुंबक अपने सिरों को चुंबकीय कणों को आकर्षित करती है और चुंबकीय लाइनों चुंबक के ध्रुवों के बीच प्रवाह के द्वारा वेल्ड हिस्सा के परीक्षण में कोई दरार या अन्य वेल्ड समस्या होता है, तो चुंबकीय कणों उनको आकर्षित नहीं करता है इस तकनीक से बड़ी और भारी संरचनाओं के निर्माण में सुधारों की आवश्यकता कम होगी।

ज्ञान का उपयोग, स्टैंडर्ड कोड से मिलाकर वे (वेल्डिंग इंस्पेक्टर) वेल्डिंग का चयन और उपकरण का सेटअप वेल्ड की अच्छी गुणवत्ता के लिए वेल्डर से तैयार करवाते है। वेल्डर का काम बड़ी चुनौती होती है। वेल्डिंग के गुणवत्ता परिणाम की जांच वेल्ड की मजबूती और संक्षारण प्रतिरोधकता के लिए करते हैं, निर्माण के ड्राइंग में आरंभिक वेल्डिंग प्रिंट पढ़ने के बाद, उचित वेल्डिंग, फिटिंग और निरीक्षण कर वेल्डिंग से पाइप और धातु प्लेट को जोड़कर टैंक बनाते हैं जिसमें अग्नि सुरक्षा का पूरी तरह से विचार कर ही वेल्डिंग मशीन और पूरक धातु के द्वारा एक उच्च तापमान (500-950°C) पर वेल्डिंग टॉच द्वारा जोड़ते हैं। एक अच्छे वेल्डिंग इंजीनियर को वेल्डर की कौशल की जाँच के लिये अच्छी दृष्टि और हाथ से आँख का समन्वय के साथ-साथ मैनुअल निपुणता की जरूरत होती है। वेल्डर को लंबी अवधि तक वेल्डिंग के लिए की परीक्षा के लिए विस्तृत कार्य पर ध्यान केंद्रित करने और वेल्डिंग की साइट पर काम के लिए शारीरिक रूप से फिट होना चाहिए। वेल्डिंग प्रक्रिया में वेल्डिंग के वक्त वेल्ड में दोष आ सकते हैं। इसके लिए वेल्डिंग निरीक्षक, वेल्ड के निरीक्षण का कार्य एनडीटी परीक्षण द्वारा पूरा करते है। रेडियोग्राफिक और अल्ट्रासोनिक तकनीक अविनाशी परिक्षण सबसे आम तरीकों में से है दो प्रकार के एनडीटी परीक्षण होते हैं। अविनाशी परिक्षण के स्पष्ट लाभ वेल्डर, वेल्डेड भाग को बिना नष्ट करके वेल्ड दोषों का पता लगा सकते हैं। एनडीटी परीक्षण के अनुसार, रेडियोग्राफिक परीक्षण में एक्स-रे या गामा रे से फोटो फिल्म पर एक ठोस वस्तु (वेल्ड) के माध्यम से गुजरता है किसी भी दोष में रेडियोग्राफिक छवि एक स्थायी रिकार्ड प्रदान करता है वेल्डिंग और वेल्डिंग निरीक्षण में डिजीटल फोटोग्राफी के माध्यम से प्राप्त वेल्डिंग की तस्वीरों को विशेष सॉफ्टवेयर के माध्यम से प्रोसेस किया जाता है। इससे वेल्डेड संरचनाओं की थ्री-डी तस्वीर प्राप्त होती है जिससे वेल्डिंग की प्रक्रिया के दौरान उत्पन्न ताप और फिर ठंडा होने के कारण उत्पन्न वितियों का ऑकलन सही तरीके से किया जा सकता है। यह एक धीमी और महंगी विधि है। इसमें थ्री-डी तकनीक बेहद कारगर हो सकती है। वेल्ड गुणवत्ता में वेल्ड के अंदरूनी हिस्सों में सरंध्रता, समावेशन, दरारें और रिक्तियों का पता लगाने के लिए अल्ट्रासोनिक जांच भी एक अच्छी तकनीक है। अल्ट्रासोनिक जांच के द्वारा अल्ट्रासोनिक ऊर्जा की किरण के माध्यम से यांत्रिक कंपन वेल्ड से गुजरता हैं-किसी भी दोष से अल्ट्रासोनिक रे वापस परिलक्षित होगा वहाँ वेल्ड में दोष है वेल्ड में दोष की सही स्थिति का निर्धारण करने की क्षमता एक योग्यताधारी वेल्डिंग इंजीनियर एनडीटी परीक्षण के द्वारा देता है। वेल्डिंग इंजीनियर इस प्रक्रिया का उपयोग कर वेल्डर ऑपरेटर क्षमता और प्रशिक्षण की सही स्तर जान जाते हैं। तरल डाई व्याप्ति परीक्षण वेल्ड में दरार का पता लगाने के एक आम गैर विनाश विधि है। यह विधि लौह और अलौह सामग्री के लिए अच्छा है यह किसी भी दरारें या वेल्ड में सील वेल्ड समस्याओं (सरंध्रता या संलयन दोषों) का पता नहीं लगा सकते हैं। वेल्ड विसंगतियों की एक व्यापक रेंज का पता लगाने के लिए, चुंबकीय कण परीक्षण एक बेहतर विकल्प है। इस तकनीक के द्वारा वेल्ड दोषों में दरार, साथ ही सरंध्रता, तेजी, समावेशन और सरंध्रता संलयन का पता लगा सकते हैं। इस विधि में वेल्ड के भाग में एक चुंबकीय क्षेत्र की फ्लक्स के द्वारा गुजारा जाता है -एक चुंबक अपने सिरों को चुंबकीय कणों को आकर्षित करती है और चुंबकीय लाइनों चुंबक के ध्रुवों के बीच प्रवाह के द्वारा वेल्ड हिस्सा के परीक्षण में कोई दरार या अन्य वेल्ड समस्या होता है, तो चुंबकीय कणों उनको आकर्षित नहीं करता है इस तकनीक से बड़ी और भारी संरचनाओं के निर्माण में सुधारों की आवश्यकता कम होगी। इससे समय, धन और श्रम की बचत होगी, वहीं संरचनाओं की गुणवत्ता में भी सुधार होगा। किसी वेल्डिंग इंजीनियर के लिए वेल्डिंग के निर्माण में धातु आर्क वेल्डिंग में ऑक्सी आर्गन वेल्डिंग और काटने में सुरक्षा काम, देखभाल और रखरखाव और उपकरणों को

मापने के प्राथमिक ज्ञान आवश्यक है गैस और आर्क वेल्डिंग उपकरण, उनके उपयोग करता है।

कोर्स

वेल्डिंग टेकनॉलॉजिस्ट, वेल्डिंग निरीक्षण के क्षेत्र में कैरियर बनने हेतु होना वेल्डिंग इंजीनियरिंग में स्नातक की डिग्री होना नितांत आवश्यक है। इसके साथ ही साथ उच्चतम प्रतियोगी तथा तकनीकी क्षेत्र में आविष्कार तथा कुछ नया करने के लिए सृजनात्मक योग्यता भी बेहद जरूरी है। ग्रेजुएट एसोसिएट की परीक्षा उत्तीर्ण कर वेल्डिंग चित्र, वेल्डिंग प्रतीकों, वेल्ड संयुक्त डिजाइन, वेल्डिंग प्रक्रियाओं, कोड और मानक आवश्यकताओं और निरीक्षण और परीक्षण तकनीक कर विनिर्माण उद्योग क्षेत्र में साइट इंजीनियर की नौकरी कर सकते हैं। भारतीय वेल्डिंग संस्थान की ग्रेजुएट एसोसिएट की परीक्षा मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा वेल्डिंग प्रौद्योगिकी में बीई/बीटेक के समकक्ष डिग्री प्रदान करता है। वेल्डिंग इंजीनियरिंग में स्पेशलाइजेशन से मैन्युफैक्चरिंग, कृषि, खनन, परमाणु, ऊर्जा संयंत्र जैसे क्षेत्रों में कॅरियर निर्माण के दरवाजे खुल जाते हैं। इसके साथ ही वेल्डिंग इंजीनियरों की पाइप बनने वाले उद्योगों में भी खासी मांग हैं। वर्तमान समय में वेल्डिंग के क्षेत्र में योग्य और गुणी प्रोफेशनल्स के सामने कॅरियर निर्माण का एक सुनहरा संसार बाहें पसारे खड़ा है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा योग्य वेल्डिंग प्रोफेशनल्स को बड़ा भारी वेतन एवं अन्य सुविधाएं प्रदान की जाती है। विदेशों में भी वेल्डिंग इंजीनियरों की भारी मांग हैं।

वेल्डिंग टेकनॉलॉजिस्ट, वेल्डिंग निरीक्षण के क्षेत्र में कैरियर बनने हेतु होना वेल्डिंग इंजीनियरिंग में स्नातक की डिग्री होना नितांत आवश्यक है। इसके साथ ही साथ उच्चतम प्रतियोगी तथा तकनीकी क्षेत्र में आविष्कार तथा कुछ नया करने के लिए सृजनात्मक योग्यता भी बेहद जरूरी है। ग्रेजुएट एसोसिएट की परीक्षा उत्तीर्ण कर वेल्डिंग चित्र, वेल्डिंग प्रतीकों, वेल्ड संयुक्त डिजाइन, वेल्डिंग प्रक्रियाओं, कोड और मानक आवश्यकताओं और निरीक्षण और परीक्षण तकनीक कर विनिर्माण उद्योग क्षेत्र में साइट इंजीनियर की नौकरी कर सकते हैं।

मुख्य विषय

धातु की विभिन्न प्रक्रिया (पेंच, रिवेट्टिंग, टांका, टांकना, और वेल्डिंग) का अध्ययन, ऑक्सी आर्गन वेल्डिंग वेल्डिंग के लिए इस्तेमाल गैस हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और आर्गन. ऑक्सी - आर्गन का उपयोग, आग के प्रकार-विभिन्न गैस संयोजन, लौ तापमान और उनके उपयोग, वेल्डिंग जोड़ों के प्रकार का अध्ययन, सरल नमूने के साथ स्पष्टीकरण, वेल्डिंग के लिए वायु में शुद्धिकरण के लिये अक्रिय गैस आर्गन-सिलेंडर में भंग आर्गन के गुण और उपयोग, ऑक्सीजन-ऑक्सीजन सिलेंडर के गुण और सुरक्षा, एसी और डीसी आर्क वेल्डिंग, गैस धातु आर्क वेल्डिंग, गैस टंगस्टन आर्क वेल्डिंग गैस वेल्डिंग तरीकों की किस्म, एयर आर्गन वेल्डिंग, ऑक्सीजन हाइड्रोजन वेल्डिंग और दबाव गैस वेल्डिंग, प्रतिरोध वेल्डिंग, गैस और आर्क वेल्डिंग, जलमग्न आर्क वेल्डिंग, टंगस्टन सम्मिलित गैस वेल्डिंग, CO_2 वेल्डिंग, इलेक्ट्रॉन बीम वेल्डिंग, घर्षण वेल्डिंग, आर्क ब्राजेर, थर्मल वेल्डिंग, प्रतिरोध वेल्डिंग, ऊर्जा बीम वेल्डिंग, सहएक्सट्रूजन वेल्डिंग, शीत वेल्डिंग, प्रसार वेल्डिंग, घर्षण वेल्डिंग, उच्च आवृत्ति वेल्डिंग, गर्म दबाव वेल्डिंग, वेल्डिंग प्रेरण और रोल वेल्डिंग वेल्डिंग इंजीनियरिंग गस्टन अक्रिय गैस प्रक्रिया (स्पर्श वेल्डिंग) और प्लाज्मा आर्क वेल्डिंग, वेल्डिंग निरीक्षण, वेल्डिंग प्रक्रिया, वेल्डिंग इंजीनियरिंग, वेल्डिंग प्रक्रियाओं के क्षेत्र में गुणवत्ता निरीक्षण, वेल्डिंग के अनुप्रयोग, वेल्डर स्तर पर वेल्डिंग पाठ्यक्रम और प्रबंधकों को वेल्डिंग प्रौद्योगिकी, गुणवत्ता निरीक्षण और एनडीटी प्रमाणपत्र प्रशिक्षण कार्यक्रम, इंजीनियरिंग पर्यवेक्षकों के लेवल द्वारा उत्तीर्ण परीक्षा के बाद दिया जाता है। जिसका खाड़ी देश में रिफाइनरी उद्योग में भारी मांग हैं।

प्रवेश

वेल्डिंग के क्षेत्र में कैरियर बनने हेतु 12वीं कक्षा में गणित विषय होना नितांत आवश्यक है। इसके साथ ही साथ उच्चतम प्रतियोगी तथा तकनीकी क्षेत्र में आविष्कार तथा कुछ नया करने के लिए सृजनात्मक योग्यता भी बेहद जरूरी है। वेल्डिंग प्रौद्योगिकी की डिग्री पत्राचार द्वारा भारतीय वेल्डिंग संस्थान की ग्रेजुएट एसोसिएट की परीक्षा उत्तीर्ण कर गेट द्वारा विभिन्न इंजीनियरिंग कॉलेजों में उपयुक्त क्षेत्र में एम. टेक. में प्रवेश कर वेल्डिंग प्रौद्योगिकी में एक अच्छा कैरियर बनाकर पाइपिंग उद्योग और मशीनरी विनिर्माण उद्योग में अभियंता का कार्य कर सकते हैं। इस क्षेत्र में कैरियर बनाने के लिए इन क्षेत्र से संबंधित तकनीकों से भी अवगत होना चाहिए यदि आप वेल्डिंग में डिजाइनिंग और क्वालिटी कंट्रोल में विशेषज्ञता प्राप्त करना चाहते हैं जहां यांत्रिक इंजीनियरिंग में स्नातक की डिग्री एक निर्धारित योग्यता है.

मुख्य संस्थानः

- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी (आईआईटी) खडगपुर, नई -दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, कानपुर, गुवाहाट और रुड़की।
- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बैंगलुरू
- पीएसजी प्रौद्योगिकी कॉलेज, कोयम्बटूर
- जादवपुर यूनिवर्सिटी, कोलकाता।
- एम.एस. यूनिवर्सिटी, बड़ौदा।
- नेताजी सुभाष इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, नई दिल्ली।
- बिड़ला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी एंड साइंस (बिट्स), पिलानी।
- कोचिन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी, कोच्चि।
- वीरमाता जीजाबाई टेक्नॉलॉजी इंस्टीट्यूट, मुंबई।
- थापर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, पटियाला।
- यूनिवर्सिटी ऑफ हैदराबाद, हैदराबाद।
- संत लोंगोवाल इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी संस्थान, पटियाला
- एडवांस वेल्डिंग प्रौद्योगिकी संस्थान, चेन्नई
- गुणवत्ता प्रबंधन संस्थान, मुंबई
- दिल्ली विश्वविद्यालय ,नई दिल्ली
- मद्रास विश्वविद्यालय, चेन्नई
- इंडियन स्कूल ऑफ माइंस, धनबाद
- जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और रोबोटिक्स प्रौद्योगिकी संस्थान, बंगलोर
- राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, पटना
- बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी एण्ड साइंस, पिलानी
- पीएसजी कॉलेज, कोयम्बटूर
- श्री सत्य साई इंस्टिट्यूट, चेन्नई(तमिलनाडु)
- एस.आर.एम. विश्वविद्यालय, कांचीपुरम
- डॉ.सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर

वेतन

इस क्षेत्र में निजी और सरकारी क्षेत्र में बेहतरीन वेतन प्रदान किया जाता है। सामान्यतः आरंभिक वेतन 50 हजार से 1 लाख रुपये मासिक के बीच होता है। वेल्डिंग टेक्नॉलॉजिस्ट /निरीक्षण इंजीनियरिंग में स्पेशलाइजेशन से मैन्युफैक्चरिंग, कृषि, खनन, परमाणु, ऊर्जा संयंत्र जैसे क्षेत्रों में कॅरियर निर्माण के दरवाजे खुल जाते हैं। इसके साथ ही वेल्डिंग इंजीनियरों की टैंक बनने वाले उद्योगों में भी खासी मांग हैं।

goswamisanjay80@yahoo.com

❑❑❑

रपट

13वें वर्ल्ड रोबोट ओलंपियाड का भारत में आयोजन

हमारे के लिए यह एक सम्मान की बात है कि रोबोट ओलंपियाड का वैश्विक आयोजन इस बार भारत किया गया। ग्रेटर नोएडा स्थित इंडिया एक्सपो मार्ट में इस ओलंपियाड का आयोजन भारत सरकार के अंतर्गत संस्कृति मंत्रालय के राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद (एनसीएसएम) और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग तथा बच्चों में कम्प्यूटर विज्ञान की ओर रूचि जगाने में संलग्न नान प्राफिट संस्था इंडिया स्टेम फाउंडेशन (आईएसएफ) के संयुक्त तत्वावधान में 26 और 27 नवंबर 2016 को संपन्न हुआ। इस अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम का औपचारिक उद्घाटन महेश शर्मा, माननीय संस्कृति मंत्री (भारत सरकार) ने किया। इस वर्ष के वर्ल्ड रोबोटिक्स ओलंपियाड का मुख्य विषय था 'रैप दी स्क्रैप' अर्थात कबाड़ से कमाल। इस रोबोट ओलंपियाड में दुनिया के 51 देशों के तकरीबन 2000 होनहार विद्यार्थी अपने-अपने नवाचारी रोबोट तकनीकियों के साथ आये। इन विद्यार्थियों की कुल 463 टीमें बनाई गई थीं जिनके अंतर्गत उन्होंने अपने रोबोटों के अनोखे प्रोटोटाइप को प्रदर्शित किया। रोबोटिक्स की इस विश्व प्रतियोगिता में 9.25 वर्ष आयु वर्ग के प्रतियोगियों ने चार श्रेणियों (रेगुलर, डब्ल्यूआरओ फुटबाल, ओपन और एडवांस्ड रोबोटिक्स चौलेन्ज) के अंतर्गत हिस्सा लिया।

इस कार्यक्रम के उद्घाटन के बाद अपने सम्बोधन में डॉ. महेश शर्मा ने कहा, नवाचार में तेजी लाना और युवाओं की सृजनशीलता को बढावा देना सरकार की मुख्य प्राथमिकता है। इस प्रकार के आयोजन युवाओं को अपनी मेधा को दुनिया के सामने रखने का एक विशाल मंच प्रदान करते हैं। हमारे मंत्रालय के अंतर्गत संस्थान राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् देश के अनेक हिस्सों में मौजूद विज्ञान केंद्रों और इन्नोवेशन हब के नेटवर्क के माध्यम से बच्चों तथा युवाओं में नवाचार और सृजनशीलता को पोषण देता रहा है। अक्सर इस प्रकार के अनोखे अंतर्राष्ट्रीय समारोह के आयोजन से लोग कतराते हैं मगर हमें खुशी है कि हमारे अपने देश में भारत सहित दुनिया के अनेक देशों की रोबोटिक्स की माहिर और उत्साही टीमें यहाँ पर एकत्र हुई हैं। हम इन सभी टीमों और प्रतियोगियों को हार्दिक शुभकामनाएँ देते हैं और उम्मीद करते हैं कि ये अपने कौशल से दुनिया के सामने मौजूद समस्याओं को निजात दिलाने में अहम भूमिका निभाएंगे।

इस अवसर पर एनसीएसएम के महानिदेशक और इस वर्ल्ड रोबोटिक्स ओलंपियाड की संगठन समिति के चेयरमैन श्री ए. एस.मानेकर ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि एनसीएसएम, सीखने की हैंड्स आन माइंडस आन पद्धति की वकालत करता रहा है और मेरा मानना है कि यह प्रतियोगिता रोबोटिक्स शिक्षा को लेकर जागरूकता का प्रसार करेगी और भारत में हैंड्स आन लर्निंग के वातावरण का सृजन होगा। यहाँ पर विद्यार्थियों के द्वारा कम समय के अंदर अनेक कार्यों को पूरा करने के लिए विशेष रूप से डिजायन और प्रोग्राम किये गये स्वचालित रोबोटों को देखना एक रोचक अनुभव की तरह है।

रोबोटिक्स के बारे में बच्चों और जन सामान्य में जागरूकता को बढावा देने के उद्देश्य से सन 2006 से इस संकल्पना पर ओलंपियाड का आयोजन किया जा रहा है। इस हैंड्स आन लर्निंग प्लेटफार्म की मदद से विगत एक दशक की अवधि के दौरान तकरीबन एक लाख स्कूली बच्चे लाभांवित हो चुके हैं।

इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए श्री समरेन्द्र कुमार, निदेशक (मुख्यालय), एनसीएसएम ने कहा कि पूरी दुनिया से इतनी बड़ी संख्या में भागीदारी को देखकर हमें अपार खुशी का अनुभव हो रहा है और इस वर्ष का विषय 'रैप दी स्क्रैप' भारत सरकार के स्वच्छ भारत मिशन से भी जुड़ा हुआ है। यह कार्यक्रम हमारी भावी पीढी की नवाचारी योग्यताओं के प्रदर्शन के लिए एक बहुत विशाल मंच के रूप में हमारे सामने है।

वर्ल्ड रोबोटिक्स ओलंपियाड सलाहकारी परिषद् के अध्यक्ष लाओ किंग हुई ने इस मौके पर कहा कि यह ओलंपियाड हजारों प्रतिभाओं और युवाओं को एक स्थान पर पहुंचकर विश्व चुनौतियों के समाधान को लेकर एक दूसरे को प्रेरित करने का एक अनोखा मंच प्रदान करता है। ये सभी प्रतिभागी वास्तव में हमारी दुनिया के भविष्य निर्माता हैं। यहां पर प्रतियोगिता में बाजी मारना ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि यहां जो सीखने को मिलता है, वह अधिक अहमियत रखता है। इस विश्व रोबोटिक्स ओलंपियाड के आयोजन से पहले रोबोटिक्स की क्षेत्रीय प्रतियोगिताएं अगस्त से

अक्टूबर 2016 के दौरान भारत के दिल्ली, लखनऊ, तिरुपति, त्रिवेंद्रम, चेन्नई, कोलकाता, वाराणसी, गुवाहटी, बंगलुरु, सूरत, मुंबई, भोपाल और चंडीगढ़ जैसे नगरों में की गई थीं। इन सभी स्थानों में हुई प्रतियोगिताओं में से कुल 245 टीमें राष्ट्रीय प्रतियोगिता के लिए चयनित की गई थीं और 22, 23 अक्टूबर 2016 के दौरान नेताजी इनडोर स्टेडियम, कोलकाता में आयोजित राष्ट्रीय प्रतियोगिता में इन्हें अपने हुनर दिखाने का मौका मिला। इस राष्ट्रीय प्रतियोगिता के बाद भारत से कुल 27 टीमें विभिन्न श्रेणियों के अंतर्गत अंतिम रूप से वर्ल्ड रोबोटिक्स ओलंपियाड के अंतर्राष्ट्रीय चौम्पियनशिप के लिए चुनी गईं। इसी तरह दुनिया के दूसरे देशों के प्रतियोगियों को भी अपने-अपने देश की राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं से होकर गुजरना पड़ा और कुल मिलाकर 51 देशों की 463 से अधिक टीमें अंतिम रूप से चुनकर इस विश्व प्रतियोगिता में सम्मिलित हो सकीं। इस प्रतियोगिता के अंतिम परिणाम में भारत के अनेक प्रतियोगी सभी श्रेणियों में विजेता बने।

इंडिया इंटरनेशल ट्रेड फेयर 2016

देश की वैज्ञानिक उन्नति की झाँकी दिखाता डीएसटी पवैलियन

देश में सरकारी, गैरसरकारी और निजी स्तरों पर व्यापार तथा वाणिज्य को बढावा देने के उद्देश्य से प्रत्येक वर्ष दिल्ली के प्रगति मैदान में 14 से 28 नवंबर के दौरान 15 दिनों तक अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले (इंडिया इंटरनेशल ट्रेड फेयर) का आयोजन किया जाता है। इस मेले में भारत के साथ-साथ दुनिया के अनेक देशों के सरकारी और गैर सरकारी संगठन अपने देश के प्रतिष्ठित व्यापारिक/व्यावसायिक उत्पादों के साथ उनके प्रचार-प्रसार के लिए आते हैं। इन व्यापार मेलों में लाखों की भीड़ उमड़ती है।

साल 2016 का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला भी अनेक आकर्षणों के साथ 14 से 28 नवंबर के दौरान आयोजित किया गया। हाल ही में विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), भारत सरकार के पैविलियन ने सभी विजिटरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। डीएसटी पैविलियन का उद्घाटन भारत सरकार के केंद्रीय विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पृथ्वी विज्ञान मंत्री डॉ. हर्ष वर्धन ने किया। इस अवसर पर विभाग के सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा भी मौजूद रहे। डीएसटी के पैविलियन में देश की मौजूदा वैज्ञानिक उन्नति की एक झलक मिलती है। इस पैविलियन का मुख्य थीम रहा 'डिजिटल प्रौद्योगिकी के विशेष संदर्भ में दूरसंचार तकनीकों के विकास का सफर'। इस थीम से संबंधित वैज्ञानिक जानकारी को आकर्षक पोस्टरों और 3डी होलोग्राफी के स्वरूपों में डीएसटी पैविलियन में प्रदर्शित किया गया था। इस थीम के अंतर्गत दूरसंचार की प्रारंभिक प्रौद्योगिकी से लेकर वर्तमान मोबाइल, इंटरनेट और ईमेल के विकास की सीढियों से जुड़ी वैज्ञानिक जानकारी को सचित्र दर्शाया गया था। डीएसटी के इस पैविलियन में विभाग के लगभग 10 संस्थानों और प्रयोगशालाओं ने हिस्सा लिया और अपनी प्रौद्योगिकियों और उत्पादों को डिस्प्ले किया। इनमें प्रमुख संस्थान थे। रामन अनुसंधान संस्थान (बेंगलुरु), नेशनल एटलस एंड थीमेटिक मैपिंग आर्गनाइजेशन (कोलकाता), सर्वे आफ इंडिया (कोलकाता), नार्थ ईस्ट सेंटर फार टेक्नॉलॉजी एप्लीकेशन एंड रिसर्च/नेक्टर (शिलांग), विज्ञान प्रसार (नोएडा), श्रीचित्रतिरुमल इंस्टिट्यूट फार मेडिकल साइंसेज एंड टेक्नॉलॉजी (तिरुअनंतपुरम), एरिस (नैनीताल), टाइफैक (नई दिल्ली), नेशनल इन्नोवेशन फाउंडेशन (अहमदाबाद)। इन संस्थानों और प्रयोगशालाओं की प्रदर्शनियों तथा वीडियो से व्यापार मेले में पहुँचने वाले विजिटर उत्साहित दिखे। विशेष तौर पर बच्चे, युवा विद्यार्थी, शोधार्थी और अभिभावकों ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के इस पविलियन में रूचि प्रदर्शित की। विद्यार्थियों ने इन वैज्ञानिक संस्थानों से अकादमिक या शोध के स्तरों पर जुड़ने के लिए जानकारी प्राप्त की और नेशनल इन्नोवेशन फाउंडेशन जैसे संस्थान के लोकोपयोगी व स्वास्थ्यवर्धक उत्पादों ने लोगों को आकर्षित किया। डीएसटी के विज्ञान संचार संस्थान विज्ञान प्रसार द्वारा इस पैविलियन में अकादमिक सहयोग प्रदान किया गया।

gauravjayna@gmail.com
bhushan@vigyanprasar.gov.in

अब दिव्यांगों की ऐसे मदद करेगा गूगल मैप

गूगल मैप अब दिव्यांगों की जिंदगी आसान बनाएगा। कंपनी गूगल मैप में एक ऐसा फीचर जोड़ने जा रही है जिससे दिव्यांग किसी जगह का पता लगाने के साथ-साथ यह भी जान सकते हैं कि वहाँ व्हीलचेयर से जाने की सुविधा मौजूद है या नहीं। गूगल मैप में अमेनटीज (सुविधा) का एक कॉलम जोड़ा जा रहा है। अब जब भी आप किसी होटल, सिनेमाघर, अस्पताल या संग्रहालय आदि का पता गूगल मैप पर खोजेंगे, तो इसके साथ ही सुविधा के कॉलम में यह भी लिखा आएगा की वहाँ व्हीलचेयर से प्रवेश कर सकते हैं या नहीं। मैप में यह नई सुविधा जोड़ने के लिए गूगल के कर्मचारी दिन-रात मेहनत कर रहे हैं। कंपनी ने कर्मचारियों से कहा है कि वह रोजमर्रा के काम गूगल समाचार, जीमेल आदि पर करने के अलावा काम के घंटे का 20 फीसदी समय इस प्रोजेक्ट पर दें। इस बात का पता लगाएँ कि शहर में कौन सी ऐसी जगहें हैं जहाँ व्हीलचेयर आसानी से ले जाई जा सकती है। साथ ही ऐसी जगहों को तुरंत गूगल मैप पर अपडेट किया जाए। गूगल ड्राइव के प्रोडक्ट मैनेजर और इस फीचर से जुड़े रियो अकासाका ने कहा, वह अन्य कामों से अलग 20 फीसदी समय इस फीचर को अपडेट करने में दे रहे हैं।

फीचर पर अकासाका के अलावा 10 और लोग पिछले एक साल से काम कर रहे हैं। कंपनी जगहों का पता लगाने के लिए स्थानीय गाइडों की मदद ले रही है। फिलहाल यह फीचर अभी अमेरिका के उपभोक्ताओं के लिए ही उपलब्ध होगा। इस फीचर से न सिर्फ व्हीलचेयर पर बैठे व्यक्ति बल्कि उन माता-पिता को भी फायदा होगा जो अपने छोटे बच्चों और उनके प्रेम (बच्चा गाड़ी) के साथ कहीं घूमने जाना चाहते हैं। दिव्यागों को रास्ता दिखाने के लिए गूगल मैप के पहले से भी कुछ साइट मौजूद हैं, जिनमें एक्सेस अर्थ, अकोमेबल.कॉम ऐसी ही साइटें हैं। एक्सेस अर्थ पर किसी जगह का नाम लिखते ही उस पर तुरंत यह दिखाई पड़ता है कि वहां व्हीलचेयर के सहारे जा सकते हैं या नहीं।

आसुस का फोटोग्राफी और दमदार बैट्री वाला फोन

जेनफोन 3 मैक्स स्मार्टफोन के भारत में निर्माण की योजना की घोषणा के एक महीने बाद ताइवान की स्मार्टफोन कंपनी आसुस के अनुसार जेनफोन 3 मैक्स का 5.5 इंच (जेडसी553केएल) का मॉडल अब देश में उपलब्ध है। इस स्मार्टफोन को मोबाइल के खुदरा विक्रेताओं और मुख्य ऑनलाइन सेल्स पोर्टल्स से खरीदा जा सकता है। 17,999 रुपये की कीमत में इस फोन को पिछले महीने लॉन्च किया गया था। आसुस इंडिया के साउथ एशिया एंड कंट्री मैनेजर पीटर चांग ने कहा कि 5.2 इंच के हमारे स्मार्टफोन को भारतीय बाजार में बेहतरीन प्रतिक्रिया मिली है। शक्तिशाली बैट्री वाला जेनफोन 3 मैक्स यह सुनिश्चित करता है कि इसके उपयोगकर्ता इस फोन की विशेषताओं, बेहतरीन फोटोग्राफी अनुभव तथा लंबी बैट्री का आनंद उठा सकें। कंपनी के अनुसार वह दमन में अपने संयंत्र में स्मार्टफोन का निर्माण करेगी। पिछले साल जेनफोन 2 लेजर और जेनफोन गो लास्ट का देश में निर्माण के बाद कंपनी इस तीसरे फोन का निर्माण भारत में करने जा रही है। इस स्मार्टफोन में 4,100 एमएएच की शक्तिशाली बैट्री, 16 मेगापिक्सल का प्राइमरी कैमरा, आठ मेगापिक्सल सेकंडरी कैमरा है। जेनफोन 3 मैक्स में फिंगरप्रिंट सेंसर भी है।

आपको जूते दिखाएंगे रास्ता

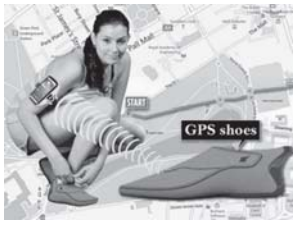

एक शोधकर्ता ने ऐसा एक जूता तैयार किया है जो दृष्टिबाधित लोगों के साथ-साथ किसी भी व्यक्ति को रास्ता बता सकता है। इससे लोगों का कहीं भी आना-जाना आसान हो सकेगा। इस जूते को 'लेचल' नाम दिया गया है। मिशिगन यूनिवर्सिटी से स्नातक और हैदराबाद से ताल्लुक

रखने वाले क्रिस्पेन लॉरेंस ने हैप्टिक तकनीक की बदौलत दृष्टिबाधित लोगों का कहीं भी आना-जाना आसान बनाने के बारे में सोचा। हैप्टिक तकनीक से बल, कंपन या गति का इस्तेमाल कर उपयोक्ता को स्पर्श का ज्ञान कराया जा सकता है। उन्होंने महसूस किया कि फोन में इस्तेमाल होने वाला जीपीएस उपयोक्ताओं को उनके गंतव्य तक पहुंचाने में मदद करता है। इसके बावजूद कई लोग भटक जाते हैं। लॉरेंस ने कहा, हमने साल 2011 में इसकी शुरुआत की थी। तब लेचल महज एक विचार था, जिसे हम साकार करना चाहते थे। हमने इस पर जितना काम किया, उतने ही नमूने तैयार हुए। हमने उन सभी का परीक्षण किया। तब हमने यह महसूस किया कि यह केवल दृष्टिबाधित लोगों की बजाय सबके काम की चीज हो सकता है।

उन्होंने पाया कि सामान्य लोग भी जीपीएस के जरिये रास्ते पर आगे बढ़ने में सहज नहीं रहते और तकनीक की गिरफ्त महसूस करते हैं। वह लोगों को इस असुविधा से मुक्त करना चाहते थे। लॉरेंस के अनुसार, यही विचार 'लेचल' जूतों के निर्माण की प्ररेणा बने। लॉरेंस ने कहा, लेचल जूते दरअसल पहनने वाली एक तकनीक हैं। ये आपके शरीर का एक विस्तार हैं। अब तक ऐसी जो तकनीकें रही हैं, वे ज्यादातर सुनने या देखने पर आधारित रही हैं। हमने महसूस किया कि स्पर्श की क्षमता सबसे शक्तिशाली होती है, लेकिन तकनीक के निर्माण में उसका पर्याप्त उपयोग नहीं किया गया है। लॉरेंस की कंपनी ड्यूसेर टेक्नॉलॉजीज ने हाल ही में लेचल को जारी किया। उन्होंने इसे एक स्टार्टअप की तरह शुरू किया था। इनकी कंपनी में करीब 100 लोग कार्यरत हैं, जिनमें से 75 फीसदी विशेष रूप से सक्षम हैं।

ऐसे पाएं रीसाइकल बिन से डिलीट हुई फाइल

कई बार आप से गलती से कोई जरूरी फाइल डिलीट हो जाती होगी। उस पर भी अगर हमने रीसाइकल बिन भी खाली कर दिया तो मुश्किल और बढ़ जाती है। हम में से ज्यादातर लोग इस तरह की गलतियां कर बैठते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि डिलीट हो गई फाइल बहुत जरूरी होती है। अब ऐसी स्थिति में क्या करें, समझ में नहीं आता। फिर हमें आईटी एक्सपर्ट के पास जाना पड़ता है। लेकिन अब आप खुद भी डिलीट हुई फाइल को रिकवर कर सकते हो। ऐसे सॉफ्टवेयर अब बाजार में उपलब्ध हैं, जिनकी मदद से ऐसा किया जा सकता है। ऐसा ही एक सॉफ्टवेयर है रिकूवा(Recuva)। यह सॉफ्टवेयर माइक्रोसॉफ्ट के विंडोज 7, विस्टा, विंडोज 2003 और विंडोज 2000 आदि सभी ऑपरेटिंग सिस्टम्स पर काम करता है। इसकी मदद से फाइल (टेक्स्ट/ऑडियो/वीडियो) के अलावा डिलीट हो चुकी ई-मेल्स को भी रिकवर किया जा सकता है।

सबसे पहले रिकूवा सॉफ्टवेयर को डाउनलोड करना होगा। डाउनलोड करने के बाद जब सॉफ्टवेयर को रन करेंगे तो एक विजार्ड विंडो खुल कर आएगा। विंडो में कई तरह की फाइलों के बारे में पूछा जाएगा। जिस तरह की फाइल रिकवर करना चाहते हैं, उस फाइल को सेलेक्ट करके नेक्स्ट (अगले) ऑप्शन पर क्लिक करें। दूसरे ऑप्शन में संबंधित एंट्री को चेक करने के बाद रिकवर बटन पर क्लिक करो। इस बटन पर क्लिक करते ही डिलीट हुई फाइल फिर से मिल जाएगी। अगर फाइल बेहद जरूरी है तो सॉफ्टवेयर के डीप स्कैन ऑप्शन पर क्लिक करो। यह साधारण स्कैन के मुकाबले ज्यादा बेहतर तरीके से डिलीट फाइलों को खोज सकेगा। रिकूवा से, डिलीट हुई ईमेल जिप फाइल के फॉरमेट में वापस आती हैं।

सबसे पतला टू इन वन योगा बुक

लैपटॉप एवं स्मार्टफोन बनाने वाली कंपनी लेनोवो ने भारतीय बाजार में अपना सबसे पतला टू इन वन योगा बुक पेश किया, जिसकी कीमत 49,990 रुपए है। कंपनी ने इसके दुनिया का सबसे पतला टू-इन-वन... डिवाइस होने का दावा किया है। इस लैपटॉप की सबसे बड़ी ख़ासियत है इसमें दिया गया हालो की बोर्ड और रियल पेन इनपुट। यह हाइब्रिड कार्बन ब्लैक कलर में है। इसे अभी विंडोज़ वेरिएंट में लांच किया गया है। इसकी मोटाई 9.6 मिलीमीटर और वजन 690 ग्राम है। लेनोवो योगा बुक में 10.1 इंच फुल एचडी स्क्रीन है। इसमें क्वाड-कोर इंटेल एटम एक्स5-ज़ेड 8550 प्रोसेसर तथा 4 जीबी एलपीडीडीआर थ्री रैम है। इस डिवाइस में 64 जीबी इनबिल्ट स्टोरेज है, जिसे 128 जीबी तक के माइक्रोएसडी कार्ड के जरिए बढ़ाया जा सकता है। यह सिंगल नैनो सिम सपोर्ट करता है और इसमें डॉल्बी एटमॉस ऑडियो है। इसमें 8 मेगापिक्सल ऑटोफोकस रियर कैमरा तथा 2 मेगापिक्सल का फिक्स्ड फोकस फ्रंट कैमरा है। कनेक्टिविटी के लिए इसमें 4जी एलटीई, वाई-फाई 802.11 एसी, ब्लूटूथ 4.0 है। बैटरी 8500 एमएएच की है। यह अभी सिर्फ ऑनलाइन मार्केटप्लेस फ्लिपकार्ट पर उपलब्ध है।

औसत से 20°C ज्यादा गर्म हुआ उत्तरी ध्रुव, गंभीर खतरे की घंटी

उत्तरी ध्रुव के तापमान में औसत से 20 डिग्री सेल्सियस अधिक की वृद्धि दर्ज की गई है। इसके साथ ही इस साल अक्टूबर में यहाँ समुद्र में जमी बर्फ अपने अब तक के सबसे कम स्तर पर रिकॉर्ड की गई। जलवायु परिवर्तन की बहसों के बीच इन ताजा आंकड़ों ने पूरी दुनिया के लिए गंभीर चेतावनी की घंटी बजा दी है।

उत्तरी ध्रुव पर अभी ध्रुवीय रात्रि का समय चल रहा है। ऐसे वक्त में यहां रातें 24 घंटे से भी लंबी होती हैं। इस समय उत्तरी ध्रुव को सामान्य तौर पर बेहद ठंडा होना चाहिए। गर्मी का मौसम बीतने के बाद अक्टूबर के महीने से यहां समुद्र में बर्फ के जमने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। ऐसा होने की जगह यहां 1981 से 2010 के बीच रेकॉर्ड किए गए समुद्रीय बर्फ की मौजूदगी के औसत की तुलना में 28.5 फीसद बर्फ कम है। यहां बर्फ की मात्रा रिकॉर्ड करने का काम सबसे पहले 1979 में शुरू किया गया था। तब से लेकर अब तक के आंकड़ों पर नजर डालें, तो इस बार समुद्रीय बर्फ की मात्रा सबसे कम है।

नेशनल ओशनिक ऐंड और ऐटमॉसफेरिक एडमिनिस्ट्रेशन (NOAA) ने इस साल के अक्टूबर महीने को तीसरा सबसे गर्म अक्टूबर बताया है। इस सूची में 2014 पहले और 2015 दूसरे स्थान पर हैं। ग्लोबल वॉर्मिंग और जलवायु परिवर्तन को समझने के लिए आर्कटिक काफी अहम है। यहाँ होने वाले परिवर्तन दुनिया को ग्लोबल वॉर्मिंग की गंभीरता का संकेत देते हैं। असल में आर्कटिक में होने वाला बदलाव दुनिया भर के लिए खतरे की घंटी और संकट की गंभीरता का मापदंड तय करता है।

NOAA के मौसम विज्ञानियों ने बताया कि आर्कटिक असाधारण तौर पर काफी लंबे समय तक गर्म रह रहा है। अक्टूबर में ग्रीनलैंड के कुछ हिस्सों सहित ग्रीनलैंड में मौजूद बर्फ की परत को औसत से 7 डिग्री सेल्सियस अधिक गर्म पाया गया। अलास्का में NOAA के जलवायु विज्ञान व सर्विसेज के मैनेजर रिक थॉमन ने बताया, अलास्का की उत्तरी ढलान पर अक्टूबर महीने के तापमान में तेजी से वृद्धि दर्ज की गई।

सोलर सड़क से बनेगी बिजली

अगर सब कुछ ठीक रहा तो जल्द ही सोलर सड़कें सूर्य की रोशनी का इस्तेमाल कर आपके शहर को जगमग कर सकती हैं। फ्रांस की एक कंपनी बिजली पैदा करने के लिए जल्द ही ऐसे सोलर पैनल वाली सड़कें बनाने की दिशा में काम कर रही है, जो सूर्य की रोशनी का प्रयोग कर बिजली पैदा करेगी। सूरज की रोशनी को बिजली में बदलने वाली इलेक्ट्रॉनिक एवेन्यू जल्द ही शहरों में हकीकत बन सकती हैं। फ्रांस की बूइख इंजीनियरिंग ग्रुप की सब्सिडियरी कोलास एसए ने एक ऐसा सोलर पैनल डिजाइन किया है जो 18 पहिये वाले ट्रक का वजन उठा सकती हैं। फिलहाल पैनल को सड़क के ऊपर इस्तेमाल के योग्य बनाया जा रहा है और इसके लिए जल्द ही परीक्षण की शुरुआत होगी। कोलास एसए के मुख्य तकनीकी अधिकारी फिलिप हर्ले के अनुसार, सोलर फर्में अभी ऐसी जमीन का इस्तेमाल करती हैं जिनका इस्तेमाल खेती के लिए भी हो सकती हैं। वहीं सड़क का इस्तेमाल आसान है। 5 साल की रिसर्च और टेस्ट के बाद कंपनी 100 आउटडोर टेस्ट साइट बना रही है जहाँ इसका टेस्ट होगा। कंपनी की योजना इसे 2018 की शुरुआत में व्यवसायिक तौर पर शुरू करना है।

रोबॉट करेंगे सुनवाई, जज की तरह सुनाएंगे फैसला

यह सुनकर हैरान जरूर हो जाएंगे कि अब कोर्ट में जज की भूमिका में जल्द रोबॉट नज़र आने वाले हैं। जल्द ही ऐसा हो सकता है कि रोबॉट कोर्ट की कार्यवाही चलाए और न्यायाधीश की तरह सही फैसले सुनाए। एक नए अध्ययन में एक आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (AI) ने मानव अधिकारों मामलों की सुनवाई के बाद 79 प्रतिशत सटीकता के साथ फैसला सुनाया। आर्टिफिशल इंटेलिजेंस न केवल गवाहों को समझने में कामयाब है बल्कि कई नैतिक सवालों पर भी विचार करने में भी सक्षम है। आर्टिफिशल इंटेलिजेंस जज ने 5 में से 4 मामलों में यूरोपियन कोर्ट के जजों की तरह का ही फैसला सुनाया। आर्टिफिशल इंटेलिजेंस जज ने शोषण, हिंसा, निजता का अधिकार आदि मानवाधिकार हनन के मामलों की सुनवाई की। इसे यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन (यूसीएल), शेफील्ड यूनिवर्सिटी और पेन्सिलवेनिया यूनिवर्सिटी में शोधकर्ताओं ने मिलकर तैयार किया है। यूसीएल कम्प्यूटर साइंस में अध्ययन का नेतृत्व करने वाले डॉ. निकोलाओस एलीट्रास ने कहा कि उन्हें नहीं लगता है कि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस न्यायाधीशों या वकीलों की जगह बहुत जल्द ले सकेगा। मगर, यह प्रौद्योगिकी मामलों की प्राथमिकता तय करने में मददगार साबित हो सकेगी और केस के पैटर्न की जल्द पहचान करने में सक्षम हो सकेगी। यह टेक्नॉलॉजी मानवाधिकार पर यूरोपीय कन्वेंशन से संबंधित मामलों का पता करने में भी अहम टूल साबित होगी।

❑❑❑

आईसेक्ट समाचार

वित्तीय साक्षरता अभियान-भारत को डिजिटल बनाने की पहल

मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय के आदेशनुसार आईसेक्ट विश्वविद्यालय में वित्तीय साक्षरता अभियान की शुरुआत की गई। विश्वविद्यालय ने छात्रों और एक्सपर्ट्स फैकल्टी का दल गठित कर यह कार्य प्रारंभ किया। प्रथम चरण में विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के इस दल को ट्रेंड किया गया। ये विद्यार्थी कैश-लेस ईकॉनॉमी को प्रोत्साहित करने साथ ही ग्रामीण लोगों को भयमुक्त होकर ऑनलाईन पेमेंट, ऑफलाईन पेमेंट को दैनिक जीवन में अधिक से अधिक उपयोग करना सिखायेंगे। आईसेक्ट विश्वविद्यालय की कॉमर्स विभाग की डीन डॉ. दीप्ति महेश्वरी, असिस्टेंट प्रोफेसर जयंत मिश्रा और मैनेजमेंट विभाग की एचओडी डॉ. संगीता जौहरी ने छात्र-छात्राओं को संबोधित करते हुए कहा कि वित्तीय शिक्षा आज के युग में बहुत आवश्यक हो चुकी है। लोगों को वित्त की जानकारी होना अनिवार्य है ताकि वो सही फैसले ले सकें। आप और हम मिल कर अपने देश को प्रगति के मार्ग पर ले जा सकते हैं और अपने देश को डिजिटल इंडिया बना सकते हैं। विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. विजय सिंह ने बताया कि इस अभियान में सबसे पहले हम यूनिवर्सिटी को कैश लेस करने का कार्य करेंगे। इसके साथ ही आस-पास के लोगों को डिजिटल तरीकों से साक्षर करने का प्रयास किया जायेगा। आस-पास के ग्रामीणों और दुकानदारों को भी इसके प्रति जागरुक किया जायेगा।

शिक्षकों ना जाना कि कैसे छात्रों का स्ट्रेस करें खत्म

आईसेक्ट विश्वविद्यालय में इम्ब्रेस ऑफ लाइफ एण्ड जॉय विषय पर एक दिवसीय विद्यालयीन शिक्षकों हेतु वर्कशाप का आयोजन किया गया। इस वर्कशाप में हमारे शहर के जाने-माने सीनियर साइकोलाजिस्ट, डॉ. विनय मिश्रा और राजीव अग्रवाल, वाइस प्रेसिडेंट आल इंडस्ट्री मंडीदीप एसोसियेशन ने मेंटर की भूमिका निभाई। उन्होंने शिक्षकों को स्कूली विद्यार्थियों से कैसे कुशल रिश्ते बनाते हुए उनकी मानसिक व शारीरिक मनोभावना को प्रबल बनाने हेतु कई सुझाव दिए। कार्यक्रम के दौरान शिक्षकों का दल काफी उत्साही नजर आया। आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. विजय सिंह ने सभी शिक्षकों का स्वागत किया और अपने उद्बोधन में कहा कि कैसे पहले और अब की शिक्षा पद्धति में परिवर्तन आ चुका है, पैरेंट्स की उम्मीद भी कितनी ज्यादा होती है परंतु इन सबके बीच हम उस बच्चे को भूल जाते हैं कि वो इतना वर्कलोड नहीं उठा सकता इसीलिए आईसेक्ट विश्वविद्यालय ने इस वर्कशॉप को आयोजित किया जिसमें शिक्षकों को उस

21 किमी दिल्ली ओपन मैराथन में ब्रांज मेडल

दिल्ली में आयोजित सुपर सिख सरदारनी देविंदर कौर हॉफ मैराथन जो कि 21 किलोमीटर की थी उसमें आईसेक्ट विश्वविद्यालय के धावक सोनू कुमार जो कि बीपीएड प्रथम वर्ष के छात्र हैं ने तृतीय स्थान प्राप्त कर ब्रांज मेडल पर कब्जा किया। धावक सोनू को तृतीय स्थान प्राप्त करने पर सुपर सिख की तरफ से ट्राफी और ईनामी राशि से सम्मानित किया गया। आईसेक्ट विश्वविद्यालय के स्पोर्ट्स आफीसर सतीश अहिरवार के मार्गदर्शन में धावक ने मैराथन में जब प्रतिद्वंद्वी धावकों को प्रतिस्पर्धा में कड़ी टक्कर देते हुए यह जीत प्राप्त की। इस मैराथन में विश्वविद्यालय से धावक जितेन्द्र कुमार, बीपीएड, परवेश कुमार, बीपीएड, सुरजीत कुमार, बीपीएड ने भी प्रतियोगिता में भाग लेकर अन्य धावकों को कड़ी टक्कर दी।

फिजियोथेरेपी ओपीडी का शुभारंभ

आईसेक्ट विश्वविद्यालय के इंस्टिट्यूट ऑफ पैरामेडिकल साइंस में फिजियोथेरेपी ओ.पी.डी. का शुभारंभ किया गया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. विजय सिंह एवं समस्त स्टाफ और शिक्षकण उपस्थित थे। फिजियोथेरेपी विभाग नजदीकी गांव एवं आंगनबाड़ियों में उपलब्ध विभिन्न ग्रामवासियों को यह सुविधा उपलब्ध करायेगा। फिजियोथेरेपी विभाग द्वारा गर्भवती माताओं के लिए विशेष कार्यक्रम तैयार किया गया है। फिजियोथेरेपी विभाग नजदीकी आंगनबाड़ी में हर माह की 9 तारीख में गर्भवती माताओं को निशुल्क प्रशिक्षण प्रदान करेगा। साथ ही वृद्ध लोगों के लिए आईएफटी, अल्ट्रासाउंड, मोबिलिटी एक्ससाइज तथा फिजियोथेरेपी के नवीनतम सुविधाओं का लाभ ग्रामीणों तक सशक्त तरीके से पहुँचाने का प्रयास करेगा। इस कार्यक्रम में सभी की भागीदारी सुनिश्चित हो इसके लिए सूचनाएं एवं आईटी माध्यमों का उपयोग करके भी ग्रामवासियों को निरंतर स्वास्थ्य की जानकारी प्रदान की जायेगी। आईसेक्ट विश्वविद्यालय समाजिक सरोकार के प्रति सदैव प्रतिबद्ध रहा है और इस ओपीडी के माध्यम से आसपास के गांव और ग्रामवासियों को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करता रहेगा साथ ही स्वास्थ्य परीक्षण का आयोजन करता रहेगा।

परिस्थिति से निपटने का हुनर सिखा सकें। प्रथम सत्र में डॉ. विनय मिश्रा, ने प्रेजेंटेशन के माध्यम से बताया कि अकारण आपके साथ कोई घटना घट जाये और वो आपके दिलो दिमाग पर गहरा घाव कर जाये तो ऐसी घटनाएं जीवनभर विस्मृत नहीं होतीं उन पर कैसे कंट्रोल कर आप खुद को कैसे मजबूत बना सकते हैं। हम अपनी आने वाली पीढ़ी से वही बर्ताव करते हैं जो हमारे साथ घटित हो चुका है, इस पर पैरेंट्स और टीचर्स को अपना अहम रोल प्ले करना होता है, तभी छात्र मानसिक रुप से प्रबल बन पायेगा। ट्रामेटिक एक्सपीरियंस के अंतर्गत पीटीएसडी, फिजिकल एब्यूज और सेक्सुअल एब्यूज में के विषय में विस्तार पूर्वक जानकारी दी। दूसरे सत्र में राजीव अग्रवाल, ने बताया कि जिस कार्य को करने में हमें सबसे ज्यादा खुशी होती है उस काम को अपनी दिनचर्या में लेकर आयें और गुस्सैल स्वभाव को कैसे नियंत्रित करना चाहिए। सदैव खुश रहना सीखिए। किसी का इंतजार मत कीजिए कि लोग आपसे मिलने आएं आप लोगों तक खुद चलकर जाइये और उनसे मिलिए फिर अपनी जिंदगी में होने वाले सुखद एहसास को आप स्वयं महसूस करेंगे। अंत में सीनियर साइकोलाजिस्ट, डॉ. विनय मिश्रा और राजीव अग्रवाल को स्मृति चिन्ह भेंट स्वरूप दिया गया।

सराकिया हाई स्कूल के छात्रों को मिल रहा कम्प्यूटर का मौलिक ज्ञान

आईसेक्ट विश्वविद्यालय मध्य भारत का पहला निजी विश्वविद्यालय है जो अपनी गुणवत्ता के अलावा अपने सामाजिक सरोकारों के लिए देशभर में जाना जाता है। राष्ट्रीय सेवा योजना के तत्वाधान में आईसेक्ट यूनिवर्सिटी 'ज्ञानार्जन' के अंतर्गत रायसेन जिले की औबेदुल्लागंज तहसील के सराकिया गांव में विश्वविद्यालय के छात्र शिशिर सराठे, बीई (सी.एस.) सतत रुप से माह अगस्त से लगातार कम्प्यूटर ट्रेनिंग और ई-लर्निंग विषय पर वहां के हाई स्कूल के 9वीं और 10वीं के छात्रों को निशुल्क पढ़ा रहे हैं। मध्य प्रदेश सरकार द्वारा रायसेन जिले में संचालित 'ज्ञानार्जन' प्रोजेक्ट के तहत विश्वविद्यालय के छात्र द्वारा ग्राम सराकिया के हाई स्कूल के 100 छात्रों को कम्प्यूटर ट्रेनिंग और ई-लर्निंग विषय से संबंधित मौलिक ज्ञान देने का कार्य किया जा रहा है। इस मिशन को सहयोग करने की भावना से विश्वविद्यालय से छात्र प्रत्येक सप्ताह के शुक्रवार और शनिवार को ग्राम सराकिया जाकर उन्हें डिजीटल टेक्निक के करीब लाने की कोशिश कर रहे हैं। इस पहल को सराकिया हाई स्कूल की प्राचार्या डॉ. मंजुला यादव, छात्रों और अभिभावकों द्वारा सराहा जा रहा है।

ज्ञात हो कि विश्वविद्यालय द्वारा 'पढ़ेगा मेंदुआ, बढ़ेगा मेंदुआ' अभियान संचालित किया जा रहा है। इस अभियान में विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के 'उत्थान' समूह के सदस्य ग्राम मेंदुआ में कक्षा तीसरी से दसवीं तक के बच्चों को निशुल्क पढ़ा रहे हैं। आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. विजय सिंह के अनुसार विश्वविद्यालय का लक्ष्य ऐसे विद्यार्थियों को तैयार करना है जो उच्च शिक्षा के साथ समाज में तकनीकी और प्रौद्योगिकी की भूमिका पर अपना योगदान दे सकें।

स्कोप कॉलेज में नेशनल एच.आर. कॉन्क्लेव का आयोजन

भोपाल स्थित स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के सभागार में नेशनल एच. आर. कॉनक्लेव का आयोजन किया गया, जिसमें देश की जानी-मानी कम्पनियों के एच.आर. मैनेजर्स ने शिरकत की। इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि नीलेश त्रिवेदी (असिस्टेंट डायरेक्टर, एम.एस.एम.ई., भारत सरकार) थे एवं अध्यक्षता सिद्वार्थ चतुर्वेदी (ग्रुप डायरेक्टर, आईसेक्ट समूह) ने की। अपने उद्‌बोधन में मुख्य अतिथि ने कहा की आज के निरंतर बदलते हुए तथा जटिल वैश्विक माहौल में इस प्रकार के परस्पर संवाद तथा परिचर्चा के आयोजन बहुत जरूरी हैं, जिनसे कि एच.आर. मैनेजर्स जैसे विशेषज्ञो द्वारा वर्तमान औद्योगिक परिदृश्य में उपलब्ध रोजगार के अवसरों की वास्तविक जानकारी योग्य तथा प्रशिक्षित युवाओं को मिल पाती है जिसका कि लाभ निश्चित रूप से उन्हें मिलता है। इस अवसर पर संस्था के प्राचार्य डॉ.डी.एस.राघव ने कहा की युवाओं को अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु पूर्ण समर्पण भाव से परिश्रम करना चाहिये तभी सफलता सुनिश्चित हो सकती है। कार्यक्रम के दौरान भारी संख्या में उपस्थित युवाओं को सम्बोधित करते हुए विश्व प्रसिद्ध ''मुम्बई डब्बावाला एसोसिऐशन'' के जनरल सेक्रेटरी सुभाष गंगाराम तालेकर ने बड़े रोचक ढ़ंग से समझाया कि कैसे उनकी संस्था द्वारा लगातार बिना किसी चूक के विगत 30 वर्षो से लाखों लंच पैक्स सही समय पर उनके क्लाइंटस तक डिलीवर किये जाते हैं। ज्ञात हो की ''मुम्बई डब्बावाला'' प्रतिष्ठित सिक्स सिगमा सर्टिफिकेट प्राप्त संस्था है। कार्यक्रम में आमंत्रित 40 विभिन्न औद्योगिक संस्थाओं के साथ एम.ओ.यू. साइन किया गया जिसके अंतर्गत संस्था को छात्र-छात्राओं के ट्रेनिंग, इंटर्नशिप तथा प्लेसमेंट का प्रावधान रखा गया है। कार्यक्रम में प्रदीप करमबेलकर (चेयरमैन, सी.आई.आई) और पार्थ गुप्ता (मैनेजर एच.आर, कोका कोला) भी विषेश रूप से आमंत्रित थे। आमंत्रित अतिथियों ने छात्र-छात्राओं को रोजगार संबंधी आवश्यक जानकारियॉ बताई कि किसी भी औद्योगिक संस्था की एच.आर. टीम इंटरव्यू के दौरान कैंडिडेट्स में कौन-कौन से स्किल्स पर फोकस करती है और सभी को इन्ही स्किल्स में अपने को अपडेट रखना चाहिए। साथ ही उन्होंने उत्सुक्त छात्रों की रोजगार संबंधी जिज्ञासाओं का भी समाधान किया। इस अवसर पर शहर की प्रतिष्ठित मीडिया संस्थाओं के प्रतिनिधिगण और भारी संख्या मे प्रदेश की विभिन्न प्रोफेशनल शिक्षण संस्थानों से आये प्रशिक्षित युवा और छात्र-छात्रा उपस्थित रहे।

सेक्ट कॉलेज में रक्तदान शिविर का आयोजन

सेक्ट कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल एजुकेशन की राष्ट्रीय सेवा योजना (NSS) इकाई द्वारा दिनाँक 27 दिसम्बर को रक्तदान शिविर का आयोजन कॉलेज प्रांगण में किया गया। यह आयोजन जवाहरलाल नेहरू कैंसर अस्पताल के साथ मिलकर किया गया। इस शिविर में NSS इकाई के कार्यकर्ताओं के साथ-साथ अन्य विद्यार्थियों, कॉलेज स्टॉफ एवं स्कोप कैम्पस के अन्य कर्मचारियों ने स्वैच्छिक रक्तदान में भाग लिया। इस मौके पर कैंसर अस्पताल से डॉ. ओ.पी. सक्सेना एवं डॉ. स्वाती जैन के साथ टेक्नीकल यूनिट मौजूद थी। डॉ. सक्सेना के द्वारा विद्यार्थियों को कैंसर के लक्षणों एवं उसके प्रति फैली भ्रांतियों से अवगत कराया गया, एवं बीड़ी, तम्बाकू, गुटखा, व अन्य हानिकारक तत्वों के प्रति जागरूक किया गया। डॉ. स्वाति ने विद्यार्थियों का रक्तदान के प्रति फैली भ्रांतियों से अवगत कराया। इस मौके पर महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. सत्येन्द्र खरे, उप प्राचार्य योगन्द्र चौहान, डीन एकेडेमिक नितिन मोढ, NSS प्रभारी श्रुति शकरगाऐं के साथ-साथ सभी स्टॉफ एवं विद्यार्थियों ने स्वेच्छिक रक्तदान किया।

बी.एड. कॉलेज में दो दिवसीय प्रतियोगिताएँ संपन्न

सेक्ट कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल एजुकेशन में विभिन्न प्रतियोगिताओं के अंतर्गत पाक कला, सलाद सज्जा, निबंध प्रतियोगिता तथा सामान्य ज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन दिनाँक 9-10 दिसंबर 2016 को किया गया जिसमें बी.एड. के प्रथम वर्ष और द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों ने बढ़चढ़कर हिस्सा लिया, निर्णायक गण ने विद्यार्थियों को प्रथम, द्वितीय व तृतीय घोषित कर प्रतियोगियों का हौसला बढ़ाया इस अवसर पर बी.एड. विभाग के समस्त शिक्षकों एवं उप-प्राचार्या डॉ.नीलम सिंह ने सबका आभार व्यक्त किया।